मानव जीवन सर्वश्रेष्ठ है

मानव और पशुओं की जीवन शैली में अंतरः-

मनुष्य दुनियाँ का सर्वश्रेष्ठ विकासशील प्राणी है। जिसको पाँचों इंद्रियों (आँख, कान, नाक, मुँह और त्वचा) के साथ-साथ विकसित मन, मस्तिष्क और विवेक भी प्राप्त होता है, जो अन्य किसी योनि के जीव में प्रायः नहीं होता। **मनुष्य में बोलने, अपने विचारों को व्यवस्थित रूप से अभिव्यक्त करने तथा वर्तमान, भूत एवं भविष्य के बारे में जानने, समझने, चिन्तन-मनन कर अपना भला-बुरा सोचने की क्षमता होती है।**

अतः मानव से ही बुद्धि एवं विवेक द्वारा सही स्वास्थ्यवर्द्धक विकारों से मुक्त भोजन के चयन की अपेक्षा रखी जा सकती है। अन्य प्राणियों से नहीं।

मनुष्य के रहन-सहन, खान-पान, सामाजिक व्यवस्थाओं, रीति- रिवाजों आदि में अन्य प्राणियों की तुलना में स्पष्टतः भिन्नता होती है। **अन्य प्राणियों का सामान्य जीवन प्रायः वर्तमान जीवी होता है। उनमें सम्यक् ज्ञान और स्वविवेक का प्रायः अभाव होता है। भविष्य के परिणामों के आधार पर सोचने, समझने एवं आचरण की उनमें विकसित बुद्धि नहीं होती है।**

पशु सोच समझ कर भविष्य की कल्पना एवं घटित होने वाले परिणामों के आधार पर वर्तमान में उचित सावधानी नहीं रख सकते। अतः जो आहार शरीर का पोषण करते हुए आत्मा को विकारों से मुक्त रखे, उसी को हमें प्राथमिकता देनी चाहिए।

मानव जीवन में ही आत्मा का पूर्ण विकास संभव हो सकता है। इसी कारण उसमें नर से नारायण, भक्त से भगवान और आत्मा को परमात्मा बनाने का सामर्थ्य होता है। यही मानव जीवन का परम लक्ष्य होता है, जो अन्य योनियों के जीवों में संभव नहीं होता। **हम हमारे उस सही लक्ष्य को कैसे प्राप्त कर सकें? अपनी क्षमताओं का अधिकाधिक उपयोग कैसे ले सकें? हमारी प्राथमिकताएँ क्या हो? क्या हमारे लक्ष्य एवं प्राथमिकताओं का निर्धारण अपनी क्षमताओं के अनुरूप होता है?** दो रुपये की चाय पीने के लिये जो पाँच सौ रुपये खर्च कर खुश होता है, उसे जनसाधारण मूर्ख अथवा पागल समझता है। **क्या हम अपनी अमूल्य इन्द्रियों और मन का उपयोग मानवीय गुणों को विकसित करने के बजाय क्षीण करने अथवा अपनी पूर्ण क्षमता के अनुरूप न कर वैसी मूर्खता तो नहीं कर रहे हैं। अपने आपको सभ्य, विकासशील, विवेकवान, बुद्धिमान मानने वालों के लिए चिंतन का विषय है?**

शरीर का अर्थ शास्त्रः-

शरीर का अपना अर्थशास्त्र होता है। वह अपनी बुनियादी आवश्यकताएँ पहले पूरी करता है उसके पश्चात् गैर बुनियादी आवश्यकताओं की पूर्ति होती है। जैसे गरीब व्यक्ति को सबसे पहले भोजन की आवश्यकता होती है। येन-केन प्रकारेण वह अपनी भूख को शान्त करने का प्रयास करता है। उसके पश्चात् ही कपड़ों की, रहने की, मनोरंजन, स्वादिष्ठ भोजन आदि की तरफ उसका ध्यान जाता है। शरीर की प्राथमिक आवश्यकताएँ पूर्ण होने के पश्चात् ही मन की जरूरतें प्रारम्भ होती है। जब मन की आवश्यकताएँ नहीं होती अथवा नियन्त्रित होती है तब ही साधना, उपासना, आराधना आदि के द्वारा आत्मा की आवश्यकता की तरफ प्रायः जन साधारण का ध्यान जाता है, व्यक्ति ध्यान और समाधि आदि पर विचार करता है।

आत्मोत्थान ही मानव जीवन का परम लक्ष्य :-

शरीर, मन और आत्मा तीन स्तर है। मन और आत्मा का आधार भी तो इस जीवन में शरीर ही होता है। अतः जब शरीर की मूलभूत आवश्यकताएँ पूरी हो जाती है और ऊर्जा बचती है तो फिर मन को मिलती है और जब मन को भी ऊर्जा की जरूरत न हो और ऊर्जा बचे तो आत्मा को मिलती है। आत्मा को ऊर्जा वे ही साधक दे पाते हैं, जिनके शरीर और मन की आवश्यकताएँ सीमित होती हैं और जो प्राण ऊर्जा का अपव्यय अथवा दुरुपयोग नहीं करते। ऐसे संयमित, नियमित, परिमित, अनुशासित जीवन जीने वालों में ही मानवीय गुणों का विकास होता है। सम्यक् ज्ञान, सम्यक् दर्शन और सम्यक् आचरण द्वारा मानव जीवन के सही लक्ष्य आत्मोत्थान को प्राप्त करने में सफल होते हैं।

सभी प्राणियों के साथ मैत्री भाव मानवता का प्रतीकः-

मनुष्य के पास में मन, वाणी और शरीर के रूप में तीन शक्तियाँ होती है और उसके साथ है तर्क, भावना और स्वविवेक का सम्बल। मनुष्य की जैसी भावना होती है, वैसा ही उसका आचरण होने लगता है। हमारी चेतना इन तीनों स्तरों पर कार्य करती

है। सबसे पहले हमारे सामने शरीर आता है। हम शरीर के आधार पर निर्णय लेते हैं, व्यक्ति कैसा है? उसकी आकृति, संरचना, हलन-चलन देख अनुमान लगा सकते हैं कि वह बलवान है या कमजोर, रोगी, दुःखी, चिन्तित, तनावग्रस्त आदि तो नहीं है। यह बाह्य दृष्टि है जिसमें केवल चमड़ी, चर्बी, चेहरा और चाल देखकर मनुष्य के बारे में अनुमान लगा लेते हैं, अन्दर की बात समझ में नहीं आती। वह कितना और क्यों दुःखी हैं ?इसका बोध शरीर से नहीं होता। शरीर से मन सूक्ष्म होता है, अतः वह पकड़ में नहीं आता। मन की अस्वस्थता का कारण भावनाओं की अस्वस्थता होता है, जिसकी अभिव्यक्ति वाणी के माध्यम से आंशिक रूप से ही हो सकती है। मनुष्य की भावना कैसी हो? उसके संबंध में कवि ने कितना सुन्दर विवेचन किया है-

सत्त्वेषु मैत्री, गुणिसुं प्रमोदं, क्लिष्टेषु जीवेषु कृपापरत्वम्।
माध्यस्थ भावं विपरीत वृत्तौ, सदा ममात्मा विद्धातु देव।।

अर्थात् संसार के समस्त प्राणियों के साथ निःस्वार्थ प्रेम भाव रखना, अपनी आत्मा के समान ही सभी जीवों में सुख-दुख की अनुभूति का अनुभव करना। गुणीजनों को देखकर प्रसन्न होना, दीन दुःखी का कष्ट मिटाने हेतु यथा शक्ति प्रयत्न करना तथा जो अपने से विपरीत स्वभाव वाले हैं उनके प्रति द्वेष न रख तटस्थ भाव रखना। ऐसा जीवन जीने वाले ही मानव जीवन को सफल बना पाते हैं।

मानवीय गुणों के अभाव में मानव जीवन निरर्थक :-

मानवीय गुणों के अभाव में मनुष्य और पशु में विशेष अन्तर नहीं होता। दया, करुणा, मैत्री, सेवा, परोपकार, अनुकंपा, नैतिकता, सहानुभूति, कर्तव्य पालन का विवेक मानवता का प्रतीक है। इन गुणों से शून्य मनुष्य तो मानवता के अभाव में स्वार्थी एवं अनैतिक जीवन जीता है। जिस व्यक्ति के दिल में अन्य प्राणियों के प्रति दया, प्रेम, नहीं होता वह परमात्मा का प्रेम नहीं पा सकता। भले ही वह व्यक्ति स्थानकों अथवा उपासरों में जाकर कितनी ही सामायिक, साधना, मंदिरों में पूजा पाठ, गुरुद्वारे में गुरु ग्रन्थ साहब के गुणगान, मस्जिद में नमाज और गिरजाघरों में जाकर कितनी ही प्रार्थना क्यों न करता हो ?इसलिये तो कहा है-

मक्का, मदीना, द्वारका, बद्री और केदार।
बिना दया सब झूँठ है, कहे मलूक विचार।।

अतः जो अन्याय, अत्याचार, हिंसा, क्रूरता, निर्दयता द्वारा अपनी प्राण ऊर्जा का अपव्यय अथवा दुरुपयोग करते हैं तथा मानव जीवन पाकर भी आत्मा को विकार मुक्त बनाने के लिये सम्यक् पुरुषार्थ नहीं करते, उनके और पशुओं के जीवन में आध्यात्मिक दृष्टि से विशेष अन्तर नहीं होता।

भोजन की आवश्यकता क्यों?

भोजन से शारीरिक पोषण :-

जीवन चलाने के लिए हवा और पानी के बाद में सबसे ज्यादा आवश्यकता भोजन की होती है। यदि ये तीनों पर्याप्त मात्रा में मिलें किन्तु उसका मूल स्वरूप बिगड़ जाए तो भी अनेक प्रकार की समस्याएँ हो सकती हैं। भोजन की विभिन्नताओं के कारण सबसे अधिक प्रायः आहार तत्त्व का स्वरूप बिगड़ता है। संतुलित, पोष्टिक एवं सात्त्विक, भोजन से शरीर को बाह्य एवं आन्तरिक कार्यो हेतु आवश्यक ऊर्जा ओर पोषण मिलता है। जिससे रक्त, रस, मांस, मज्जा,अस्थि, वीर्य आदि सप्त धातुओं का निर्माण होता है। शरीर में नवीन कोषों का सृजन होता है। शरीर की प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है। शरीर का तापमान संतुलित रहता है।

शरीर में रोगों का एक प्रमुख कारण शारीरिक अवयवों के तत्त्वों का असंतुलन होता है। अर्थात् किसी आवश्यक पदार्थ की कमी एवं अनावश्यक पदार्थो की वृद्धि। प्रायः उन पदार्थो की पूर्ति, उन तत्त्वों की पूर्ति करने वाली दवाओं, जड़ी बूटियों अथवा भोजन खिलाकर ही की जाती है। अतः हम जो कुछ खाते हैं अथवा जो शरीर में खाने के माध्यम से शरीर में पहुँचाते है उस पर ही हमारा स्वास्थ्य निर्भर करता है।

भोजन से स्वाद संतुष्टि :-

भोजन का उद्देश्य मात्र भूख शान्त करना ही नहीं परन्तु कभी-कभी स्वाद का आनन्द लेना भी होता है। आजकल प्रायः अधिकांश व्यक्तियों का भूख शांत करने के साथ भोजन का मुख्य आधार होता है स्वाद। स्वाद के अधीन हो हम कभी-कभी अनावश्यक हानिकारक वस्तुएँ खाते हुए भी संकोच नहीं करते। भूख एवं आवश्यकता से ज्यादा भोजन कर लेते हैं। अधिक

भोजन करने से शारीरिक अवयवों में असंतुलन और पाचन संस्थान पर अनावश्यक बोझ पड़ने से शरीर रोग ग्रस्त होने लगता है। आहार और अनाहार (उपवास) का संतुलन रखने से ही आहार ज्यादा उपयोगी बनता है। सिर्फ खाना ही खाना भोजन की उपयोगिता को कम करता है।

मानसिक एवं चारित्रिक विकास में सहायक :-

भोजन का हमारे आचार-विचार, चिन्तन, व्यवहार, मनन, स्वभाव आदि से भी गहरा संबंध होता है। इसीलिए तो हमारे यहाँ कहावत है- **''जैसा खाए अन्न, वैसा होवे मन''**। आहार के परमाणु विचारों को प्रभावित करते हैं। दूषित आहार से विचार भी दूषित होते हैं और शुद्ध आहार से शुद्ध। इसी कारण सात्त्विक आहार से जीवन में सात्त्विकता और तामसिक आहार से आचरण में पाश्विक वृत्तियाँ बढ़ती है।

सामूहिक भोज में सजगता आवश्यक :-

भोजन परिवार और समाज का एक अभिन्न अंग है। यह प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से समाज के व्यक्तियों में प्रेम और सौहार्द बढ़ाने की अहम् भूमिका निभाता है। परन्तु ऐसे आयोजनों में भोजन खिलाते समय प्राय: यह नहीं देखा जाता कि भोजन में पोषक तत्त्व कितने हैं अथवा उस भोजन से स्वास्थ्य को कितना लाभ मिलता है ?माल दूसरे का हो सकता है लेकिन पेट तो व्यक्ति का अपना ही होता है। समारोह की समाप्ति के पश्चात् मेजबान तो राहत का अनुभव करता है परन्तु खाने का विवेक न रखने वाला रोग से परेशान हो सकता है।

भोजन के तीन प्रकार

मनुष्य के भोजन को मुख्य रूप से तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है- **(1) ओज आहार, (2) रोम आहार, (3) कवल आहार**। जीव को नया शरीर धारण करते समय मिलने वाला आहार ओज आहार कहलाता है। शारीरिक रोम वायुमंडल से जिस हवा, पानी, धूप आदि को ग्रहण करते हैं उसे रोम आहार कहते हैं। कुछ विशिष्ट साधक मात्र रोम आहार से ही अपने शरीर के लिए आवश्यक ऊर्जा प्राप्त करने में सक्षम होते हैं। उन्हें अन्य किसी प्रकार के भोजन की आवश्यकता नहीं होती। जोधपुर से लगभग 50 किलोमीटर दूर बाला सती जी लगभग 43 वर्षों तक बिना भोजन, पानी रोम आहार पर जीवित रही। आज भी कालीकट के हीरा रतन माणक जैसे अनेक साधक है, जो अनेक महिनों तक मात्र सूर्य दर्शन से ऊर्जा प्राप्त कर बिना भोजन जी रहे हैं। मुँह से खाये जाने वाले अथवा किसी अन्य विधि द्वारा शरीर में डाले जाने वाले, जैसे-इंजेक्शन, ग्लूकोस आदि आहार को कवल आहार कहते हैं। आधुनिक आहार वैज्ञानिकों का सारा सोच, शोध एवं चर्चा कवल आहार तक ही सीमित होता है। आहार के अनेक और भी भेद किये जा सकते हैं। जैसे प्रकृति से प्राप्त धरती पर पैदा होने वाले पदार्थों से तैयार खाद्य या अन्य प्राणियों से प्राप्त होने वाले अवयवों से बना आहार।

मांसाहार क्या है ?

जानवरों से प्राप्त आहार को पुन: दो भागों में विभाजित किया जा सकता है। प्रथम: गाय, भैस, ऊँट, बकरी आदि से प्राप्त दूध शाकाहार की श्रेणी में आता है। दूसरा अन्य प्राणियों की हत्या द्वारा प्राप्त आहार मांसाहार कहलाता है। जो आहार हलन-चलन करने वाले चेतनाशील प्राणियों अथवा उनकी ऐसी अवस्था जो अभी तक पूर्ण विकसित नहीं होने की स्थिति में हो, परन्तु विकसित होने की संभावना हो, जैसे अण्डे, गर्भज जीव, आदि को प्रत्यक्ष-परोक्ष रूप से प्राण विहीन कर बनाया गया अथवा उनको मार कर उनके अवयवों को खाद्य पदार्थों में मिलाकर बनाया गया खाद्य पदार्थ मांसाहार अथवा हिंसक आहार की श्रेणी में आता है।

शाकाहार क्या है ?

मांसाहार के अलावा प्राय: सभी खाद्य पदार्थ शाकाहार की श्रेणी में आते हैं। अर्थात् जो खाद्य पदार्थ प्रत्यक्ष-परोक्ष रूप से बिना किसी जीव की हिंसा अथवा हानि पहुँचाए प्राप्त होते हैं, वे शाकाहारी खाद्य पदार्थ कहलाते हैं।

शाकाहार के भेद :-

शाकाहार को पुन: मुख्य रूप से तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है- **1. उत्तम, 2. मध्यम, 3. जघन्य।**

उत्तम आहार :- धान, दालें, सूखे मेवे, पेड़ के ऊपर से पक कर स्वत: नीचे गिरे हुए फल आदि उत्तम शाकाहार की श्रेणी में आते हैं।

मध्यम शाकाहार :- आधे पके हुए फल, बीज रूप में रहने वाले धान, हरी सब्जियाँ, फल, दूध एवं उनसे बने पदार्थ मध्यम शाकाहार की श्रेणी में आते हैं।

जघन्य शाकाहार :- प्याज, लहसन, आलु आदि जमीकन्द जिनकी उत्पति जमीन में होने से उनमें अनंतकायिक जीवों का अस्तित्व होने से जघन्य शाकाहार की श्रेणी में आते हैं। जैन साधक और अहिंसक व्यक्ति इसी कारण यथा संभव ऐसे पदार्थो का त्याग करते हैं।

अभक्ष्य आहार क्या है ?

हमारे शास्त्रों में पाँच प्रकार के आहार मानव के लिए अभक्ष्य बतलाये गये हैं-

1. त्रस धातक- हलन चलने करने वाले, दो से पाँच इन्द्रिय वाले जीवों की प्रत्यक्ष या परोक्ष हिंसा से उपलब्ध आहार। जैसे- मछली, अण्डे, चन्द दवाईयाँ, मांसाहार आदि।

2. बहुघात मूलक- जिसमें बहुत से एकेन्द्रिय जीवों की हिंसा होती है। जैसे प्याज, लहसन, जमींकन्द आदि।

3. नशाकारक- जो नशा उत्पन्न करते हों। जैसे शराब, तम्बाकू, गुटका, पान, स्मेक एवं हिरोइन आदि।

4. अनुपसेव्य- जिसका सेवन लोक निंद्य हो, जो सभ्य पुरुषों के द्वारा खाने योग्य नहीं होता। जैस-मल, मूत्र, लार, कफ, थूक एवं अन्य प्रकार के शरीर से विसर्जित होने वाले विकार। घास, फूस आदि जानवरों के खाद्य पदार्थ।

5. अनिष्टकारी- जो शरीर के लिए अनुकूल न हों। जैसे मधुमेह के रोगियों के लिए शक्कर, हृदय रोगियों के लिए नमक, सड़े गले, गन्दे अपाच्य पदार्थो आदि का प्रयोग। इसीलिए हमारे ऋषि मुनियों ने आहार के आधार पर पशु और मानव में स्पष्ट भेद किया है।

पशु खाता है केवल पेट भरने के लिए,
मूर्ख खाता है केवल स्वाद के लिए।
बुद्धिमान खाता है आरोग्य और शक्ति के लिए,
सन्त खाता है केवल साधना के लिए।

किसी उद्देश्य की प्राप्ति के लिए उसके योग्य बनना आवश्यक होता है। कच्चे घड़े में यदि अमृत भर दिया जाए तो घड़ा और अमृत दोनों नष्ट हो जायेंगे। घर में गन्दगी का ढ़ेर पड़ा सड़ रहा हो और वहाॅ चाहे जितना इत्र छिड़का जावें, अगरबतियाॅ जला दी जाए तो भी बदबू दूर नहीं होती है। ठीक उसी प्रकार जब तक शरीर, मन और आत्मा में विकार बढ़ाने वाले आहार से न बचा जाता है, तब तक दीर्घ, कालीन पूर्ण स्वास्थ्य की प्राप्ति नहीं हो सकती। विकारों को दूर किये बिना अथवा बढ़ाने वाली क्रियाओं के रहते तथा अभक्ष्य भोजन करने से अच्छे स्वास्थ्य की कल्पना अंधेरे में भटकने के समान ही होती है। अत: जो आहार मानव में मानवीय गुणों की अभिवृद्धि में सहायक होता है, वही आहार मानव के लिये सर्वश्रेष्ठ आहार होता है।

भोजन और आध्यात्म

सम्यक् ज्ञान ही सच्चा विज्ञान होता है :-

विज्ञान से विषय का विशेष ज्ञान होता है जबकि आत्मज्ञान से सम्यक् ज्ञान होता है। विज्ञान से व्यावहारिक ज्ञान तो होता है जबकि सम्यक् ज्ञान से मनुष्य में विवेक जागृत होता है। विवेक के अभाव में विज्ञान का सोच प्रकृति के सनातन सिद्धान्तों के विपरीत भी हो सकता है।

आज जनसाधारण भौतिक विज्ञान के भ्रामक विज्ञापनों से इतना अधिक भ्रमित हो गया है कि जीवन के परम लक्ष्य प्राप्ति का उद्देश्य ही भूल गया है। विज्ञान की बातें करने वालों का तर्क होता है कि वे धर्म-कर्म, पाप-पुण्य, हिंसा-अहिंसा आदि में विश्वास नहीं करते। उनका ऐसा सोच अज्ञानता का ही प्रतीक होता है। उनके मानने अथवा न मानने से प्रकृति के सनातन सिद्धान्त नहीं बदल जाते। करोड़ों व्यक्तियों के कहने मात्र से, दो और दो पाँच नहीं हो सकते। दो और दो तो चार ही होते हैं।

धर्म विज्ञान ही नहीं परम विज्ञान (**Supreme Science**) है। जड़ विज्ञान केवल पदार्थ का स्पर्श कर पाता है, परन्तु धर्म उस चैतन्य का भी स्पर्श करता है जो भौतिक विज्ञान को असम्भव मालूम पड़ता है। विज्ञान केवल पदार्थ को ही बदल पाता है, नया रूप दे पाता है जबकि धर्म उस चेतना को भी रूपान्तरित करता है, जो अरुपी है। जिसका आधुनिक विज्ञान द्वारा स्पर्श नहीं किया जा सकता।

विज्ञान की सीमा होती है- **To Know the how?**

किसी कार्य को कैसे किया जाय? यह जानना विज्ञान है। विज्ञान के पास कैसे ;भ्वूद्ध का जवाब हो सकता है, परन्तु बहुत सी बातों में कोई मानसिक क्रिया क्यों (**Why**) होती है? उन सभी का संतोषप्रद जवाब लगभग नहीं होता है। जिसके पास **Why** का जवाब नहीं होता, उसके पास **How** का समाधान शत-प्रतिशत सही ही हों आवश्यक नहीं ?अण्डे को शाकाहारी और बछड़ों के दूध की आवश्यकता की पूर्ति के पश्चात्, बिना इंजेक्शनों के प्राप्त दूध को मांसाहार बतलाने वाले, ऐसी वैज्ञानिक मान्यताओं वालों के चिन्तन का ही दुष्परिणाम होता है। अगर ऐसा हो तब तो माता का दूध भी उनकी दृष्टि में मांसाहार ही होना चाहिए।

भोजन प्राप्ति के स्रोत हेतु नैतिकता आवश्यक-

जो भोजन अपने कर्त्तव्यों का निर्वाह कर अथवा सम्यक् पुरुषार्थ द्वारा दूसरों के अधिकारों को बिना किसी प्रकार का कष्ट पहुँचाए, ईमानदारी से अर्जित साधनों से प्राप्त किया जाता है, वही भोजन नैतिक होता है। जैन साधुओं को भिक्षा ग्रहण करते समय ऐसे 42 प्रकार के दोषों से बचने का जो विधान है, उसके पीछे मुख्य रूप से यही भावना रही हुई है। ऐसा भोजन करने से ही साधक अपने शरीर का पोषण करते हुये मन को संयमित, नियन्त्रित और आत्मा को विकार मुक्त रख सकता है। अनैतिक स्रोतों से प्राप्त आय द्वारा निर्मित भोजन करने से मन में अशांति, भय, अस्थिरता रहती है। जिससे शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता घटती है, रोगों के पैदा होने की संभावनाएँ बढ़ने लगती है। अनैतिक साधनों से उपलब्ध भोजन करने से ध्यान साधना नहीं हो सकती।

पेट की भूख बहुत सीमित होती है, और उसे बहुत थोड़े से श्रम से व बिना किसी गलत कार्य के भी पूरा किया जा सकता है। मन की भूख कभी भी नहीं भरती और जिसे पूरा करने के लिए वह गलत काम करता है, वह उसके पेट की भूख नहीं अपितु उसके मन की भूख ही होती है। जिसे जितना तृप्त करने का प्रयत्न किया जाता है, उतनी ही वह अधिक बढ़ती है, और उसे पूरा करने के लिए मानव को छल, कपट, लूटमार, अपराध, हत्या आदि कुकर्मों की और ले जाती है, जिनका परिणाम भय, अशांति, क्रोध, लूटमार, घृणा आदि के रूप में मिलता है ओर जो उसे व्यसनों, दुर्गुणों व रोगों की ओर ले जाते हैं। इसीलिये हमारे यहाँ लोकोक्ति प्रसिद्ध है- ''**जैसा अन्न वैसा मन, जैसा मन वैसा चिन्तन। जैसा चिन्तन वैसा विचार। जैसा विचार वैसा स्वभाव। जैसा स्वभाव वैसी वृत्तियाँ और जैसी वृत्तियाँ वैसे संस्कार।**''

भोजन में भावों का प्रभाव :-

भोजन बनाने वालों के भावों की तरंगें भी हमारे भोजन को प्रभावित करती हैं। माता और पत्नी जिस प्रेम से अपने पुत्र एवं पति को खिलाने हेतु भोजन बनाती है, उसमें बाजार में उपलब्ध पौष्टिक पदार्थो से अधिक ऊर्जा और तृप्ति मिलती है। भोजन जिन भावों से बनाया जाता है, खाने वाले का मन उसी के अनुरूप बन जाता है।

बाजार में उपलब्ध भोजन तथा कारखानों से निर्मित पदार्थो में घर में बने भोजन जैसी पवित्रता, स्वच्छता, विवेक और उच्च भावों का अभाव होने से, उस भोजन से मात्र पेट भरा जा सकता है, परन्तु मस्तिष्क में शुभ विचारों का निर्माण प्रायः नहीं होता। अपितु अपाच्य पदार्थों के विसर्जन हेतु शरीर को अधिक ऊर्जा खर्च करनी पड़ती है। परन्तु आजकल घर में भोजन बनाने को मजबूरी समझा जाता है और बाहर बने पदार्थो को खाने का फैशन एवं प्रचलन काफी बढ़ गया है, जिससे न केवल स्वास्थ्य बिगड़ता है, अपितु पारिवारिक प्रेम, अपनापन और घनिष्ठता समाप्त हो रही है, जो भारतीय संस्कृति की पवित्र परम्पराओं के लिए घातक है।

भावों का भोजन से सम्बन्ध :-

खाया हुआ भोजन तीन भागों में विभक्त हो जाता है। स्थूल भाग मल बनता है, मध्यम अंश से शरीर के अवयवों का निर्माण होता है। सूक्ष्म अंश से मन की पुष्टि होती है। जिस प्रकार दही के मन्थन से उसका सूक्ष्म अंश ऊपर आकर मक्खन बन

जाता है, जिसको और तपाया जाये तो घी बन जाता है। ठीक उसी प्रकार अन्न के भावांश से मन बनता है। इसी कारण होटल के खाने से पेट तो भर सकता है, परन्तु मन नहीं। पेट भोजन से भर सकता है, परन्तु मन तो भोजन में होने वाले भावों से ही भरता है।

तामसिक भोजन करने वाला तामसिक वृत्तियों वाला होता है। तामसिक व्यक्ति शरीर के लिए जीता है। उसके लिये बाकी सब बातें गौण होती है। उसके भोजन का उद्देश्य होता है स्वाद और पेट भरना। परिणाम स्वरूप वह अधिक प्रमादी होता है। राजसिक भोजन से मन और बुद्धि चंचल होती है। राजसिक प्रवृत्ति वाले अत्यधिक महत्त्वाकांक्षी होते हैं। अतः उन्हें उत्तेजना पैदा करने वाला भोजन अच्छा लगता है। सात्त्विक भोजन ही संतुलित होने से सर्वश्रेष्ठ होता है। क्योंकि ऐसा भोजन करने से न तो उत्तेजना आती है, न मादकता तथा आलस्य और न कमजोरी। परन्तु स्फूर्ति और ताकत प्राप्त होती हैं।

भोजन खिलाने वालों के भावों का प्रभाव :-

भोजन कितना ही संतुलित, पौष्टिक, सुपाच्य, स्वास्थ्यवर्द्धक क्यों न हो, परन्तु यदि खिलाने वाले का व्यवहार अच्छा न हो, उपेक्षापूर्ण हो, वाणी में व्यंग हो, तो ऐसा भोजन भी अपेक्षित लाभ नहीं पहुँचा सकता। उदाहरण के लिए आप किसी के घर अतिथि बन कर गये। वहाँ पर आपको सर्वोत्तम पौष्टिक भोजन कराया जावे और बाद में व्यंगात्मक भाषा में आपसे पूछे कि क्या जिन्दगी में आपको ऐसा श्रेष्ठ भोजन किसी और ने कराया? क्या प्रतिक्रिया होगी आपकी ? क्या उस भोजन के पौष्टिक तत्त्वों का लाभ आपको मिलेगा ?क्या हमने भोजन पर पड़ने वाले भावों के प्रभाव को समझने का कभी प्रयास किया। घर के स्वच्छ और प्रेमपूर्ण वातावरण में बना और खाया भोजन होटलों में बने स्वादिष्ट भोजन से ज्यादा लाभकारी होता है। इसी प्रकार रात्रि भोजन कितना भी पौष्टिक क्यों न हो, अधिक गुणकारी नहीं होता। परन्तु भोजन का परामर्श देते समय बहुत कम चिकित्सक बाजार में बनी खाद्य सामग्री के तथा रात्रि भोजन न खाने का निर्देश अथवा परामर्श देते हैं।

भोजन कैसा होना चाहिए?

जिस प्रकार यंत्रों की क्षमता उसके ईंधन की गुणवत्ता और परिणाम पर निर्भर करती है। अच्छी फसल के लिए मौसम के साथ-साथ धरती की उर्वरकता का भी महत्त्व होता है। ठीक उसी प्रकार मनुष्य का जीवन और स्वास्थ्य उसके द्वारा लिये जाने वाले भोज्य पदार्थो से प्रभावित होता है। शरीर के विभिन्न अवयवों का निर्माण भोजन में उपलब्ध रासायनिक तत्त्वों से होता है। भोजन के माध्यम से जो-जो तत्त्व शरीर में जाते हैं, शरीर पर उसका प्रभाव पड़े बिना नहीं रहता। शराब पीने से नशा आता है और विष का सेवन अपना प्रभाव दिखाता हैं। फिर वह व्यक्ति चाहे जितना, स्वस्थ, शान्त, साधक ही क्यों न हो ?शराब और जहर यह नहीं देखते कि ग्रहण करने वाला व्यक्ति कौन है? उसके तो सीधे सिद्धान्त होते हैं। वह शरीर के रसायन में अपना कार्य करता है। अव्यवस्थित असंतुलित और अनुचित आहार का प्रभाव भी विष के समान होता है, जो शरीर को ऊर्जा देने के स्थान पर ऊर्जा का ह्रास करता है। हम भोजन द्वारा पेट को ऊर्जा बढ़ाने का माध्यम बनावें, न कि ऐसा गोदाम जो हमेशा ही कचरे से भरा रहे। अतः बुद्धिमान व्यक्तियों को आहार के बारे में स्वाद के साथ-साथ स्वविवेक का उपयोग कर भक्ष्य-अभक्ष्य, हितकर-अहितकर, सुपाच्य-दुपाच्य, संतुलित- असंतुलित का ध्यान रख, मौसम और शारीरिक अवस्था के अनुकूल, जो भोजन शरीर को स्वस्थ, मन को मजबूत और आत्मा को पवित्र, शुद्ध एवं निर्मल बनाता है, ऐसे भोजन का ही चयन कर सेवन करना चाहिए।

संतुलित भोजन क्या है ?

भोजन करते समय मनुष्य का उद्देश्य मात्र उदर पूर्ति, स्वास्थ्य प्राप्ति अथवा स्वाद की पूर्ति ही नहीं होता है, अपितु मानसिक, चारित्रिक एवं आध्यात्मिक विकास करना भी होता हैं। विभिन्न प्रकार के भोजन के प्रति रुचि उसके आचरण एवं पहचान का प्रतीक होती है।

अतः भोजन में उन संतुलित पदार्थों का सेवन करना चाहिए, जो शारीरिक, मानसिक, नैतिक, सामाजिक और आध्यात्मिक उन्नति में सहायक हों। प्रेम, स्नेह, मैत्री, दया, करुणा, अहिंसा, शांति आदि गुणों को विकसित करते हों तथा प्राणिमात्र के प्रति आदर सम्मान का भाव उत्पन्न कराते हों। जिस भोजन से उपर्युक्त बातों की पूर्ति न हों, अपितु विपरीत परिणाम आते हों, वह भोजन संतुलित नहीं कहा जा सकता।

पौष्टिक आहार कैसा होता है ?

भोजन में शरीर को शक्ति, पुष्टि, एवं गर्मी प्रदान करने वाले प्रोटीन, शर्करा, वसा, खनिज, विटामिन्स आदि उचित अनुपात और पर्याप्त मात्रा में होने चाहिए ताकि शरीर में अच्छे कोषाणुओं का निरन्तर सृजन होता रहे। स्वास्थ्य विभाग द्वारा प्रकाशित तालिकाओं में से कुछ भोज्य पदार्थों में उपस्थित पोष्टिक तत्त्वों की मात्रा का चयन कर अपनी आर्थिक क्षमता के अनुसार विभिन्न श्रेणी के पदार्थों में जो पसन्द अथवा उपलब्ध हो, उन खाद्य पदार्थों का व्यक्तिगत आवश्यकतानुसार चयन कर, संतुलित भोजन किया जा सकता है।

शाकाहारी खाद्य पदार्थों में भी पौष्टिक तत्त्व होते हैं :-

आज बहुत से चिकित्सक एवं व्यक्ति अज्ञानवश भ्रामक प्रचारों के कारण प्रोटीन्स और कैलोरी के लिए मांसाहार करना उचित समझते हैं। परन्तु तालिका देखने से स्पष्ट है कि बहुत से शाकाहारी पदार्थों में भी प्रोटीन्स, केलोरी, विटामिन्स, पोष्टिक

प्रोटीन्स और कैलोरी के लिए मांसाहार करना कदापि उचित नहीं

खाद्य पदार्थों का हिन्दी नाम Name of Food Stuff	प्रोटीन XGms	चिकनाई XGms	खनिज लवण XGms	कार्बोहाइड्रेट XGms	कैलशियम XGms	फासफोरस XGms	लोहा XGms	कैलोरी XGms
मूंग (Green Gram)	24.0	1.3	3.8	58.6	0.14	0.28	8.4	334
उड़द (Black Gram)	24.0	1.4	3.4	60.3	0.20	0.37	9.8	350
अरहर(तुअर)(Red Gram)	22.3	1.7	3.8	57.2	0.14	0.26	8.8	333
मसूर (Lentil)	25.1	0.7	2.1	59.7	0.13	0.25	2.0	346
मटर (Peas)	22.9	1.4	2.3	63.5	0.03	0.36	5.0	358
चना (Gram)	22.5	5.2	2.2	58.8	0.07	0.31	8.9	372
लोभिया (Cow Gram)	24.6	0.7	3.2	55.7	0.07	0.49	3.8	327
सोयाबीन (Soya Beans)	43.2	19.5	4.6	20.9	0.24	0.69	11.5	432
बादाम (Almond)	20.8	58.9	2.9	10.5	0.23	0.49	3.5	655
काजू (Cashewnut)	21.2	46.9	2.4	22.3	0.05	0.45	5.0	596
तिल (Gingili)	18.3	43.3	5.2	25.2	1.44	0.57	10.5	564
मूंगफली (Groundnut)	31.5	39.8	2.3	19.3	0.05	0.39	1.6	549
जीरा (Cumin)	18.7	15.0	5.8	36.6	1.08	0.49	31.0	356
मेथी (Fenugreek)	26.2	5.8	3.0	44.1	0.16	0.37	14.1	333
पनीर (Cheese)	24.1	25.1	4.2	6.3	0.79	0.52	2.1	348
घी (Ghee)	-	98.0	-	-	-	-	-	900
स्प्रेटा दूध पाउडर SkimmedMilk Power	38.0	0.1	6.8	51.0	1.37	1.00	1.4	357
(प्रत्येक 100 ग्राम में) मांसाहारी खाद्य Flesh Foods (Per100 gms.)								
अंडा (EGG)	13.3	13.3	1.0	-	0.06	0.22	2.1	173
मछली (FISH)	22.6	0.6	0.8	-	0.02	0.19	0.9	91
बकरी का मांस (MUTTON)	18.5	13.3	1.3	-	0.15	0.15	2.5	194
सुअर का मांस (PORK)	18.7	4.4	1.0	-	0.03	0.20	2.3	114
तालिका नं. 1						Health Bulletin No. 23 Govt. of India		

एवं अन्य तत्त्व भरपूर मात्रा में उपलब्ध होते हैं।

तालिका से हम यह भी देखते हैं कि मांसाहारी पदार्थों में फाइबर (Fibre) जो (दालों, अनाज आदि के छिलकों में भरपूर मात्रा में होती है।) की मात्रा लगभग नहीं होती है। वैज्ञानिकों द्वारा यह निश्चित हो चुका है कि फाइबर रोगों को रोकने में अत्यधिक महत्त्व रखता है। हमारे स्वास्थ्य के लिये विटामिन्स की भी आवश्यकता होती है जो शाकाहारी पदार्थों में अपेक्षाकृत अधिक होते हैं।

पशु-पक्षी व मानव सभी के भोजन का प्रमुख स्रोत तो खेती अथवा पेड़ पौधों से प्राप्त आहार ही होता है। मांस में जो प्रोटीन होता है। वह भी पशु पक्षी पेड़ पौधों से ही तो प्राप्त करते हैं। अत: सीधे शाकाहारी पदार्थों से पौष्टिकता प्राप्त करना, उस अप्रत्यक्ष पौष्टिकता से बेहतर होता है जो पशु मांस के पदार्थों से प्राप्त होता है। कुछ लोग यह भ्रान्ति फैलाते हैं कि अण्डा एक सम्पूर्ण आहार है किन्तु अण्डों में विटामिन सी, कार्बोहाइड्रेट्स व फाइबर बिल्कुल ही नहीं होते। अण्डा, मांस, मछली आदि अम्लीय भोजन होते हैं, जिसके कारण हड्डियों से कैलशियम की निकासी होती है, हड्डियाँ कमजोर होती है और कैलशियम की इस

विटामिन्स के शाकाहारी स्रोत

विटामिन	कार्य	उपलब्धता
विटामिन 'ए'	शरीर की अनेक मांसपेशियों के विकास व संरक्षण के लिये इसकी आवश्यकता होती है। आँखें सतेज रहने के लिए इस विटामिन की आवश्यकता होती है। इसके अलावा हाथों और हड्डियों के पोषण के लिये यह विटामिन आवश्यक है।	दूध, पनीर, मक्खन, हरी पत्तेदार सब्जियाँ, लाल और पीले फल और अन्य सब्जियाँ आदि
विटामिन बी - यह एक विटा-मिन का समूह है जिसमें आठ विटामिनों का समावेश होता है। विटामिन बी$_1$, बी$_2$, नियोसिन, विटामिन बी$_6$, पैन्टोथिनिक एसिड, बायोटीन , फॉलेसिन और विटामिन बी$_{12}$	इन विटामिनों से शरीर का विकास होता है। भूख लगती है। आँखें नीरोग रहती हैं। ज्ञानतंतु स्वस्थ रहते हैं। त्वचा नीरोग रहती है।	दूध, हरी सब्जियाँ, ताजे फल, मूँग,मोठ, चना मटर आदि।
विटामिन 'सी'	शरीर के विकास के लिए ये आवश्यक होते हैं। हड्डियों और दांतों में मजबूती लाने के लिए भी उपयोगी है। विविध मांस पेशियों को एक दूसरे से जोड़ने का काम भी ये करते हैं। इनसे रोग प्रतिकार शक्ति बढ़ती है। शरीर के स्टिराइड हार्मोन्स के साथ भी जुड़े रहते हैं।	खट्टे-मीठे, फल, गोभी, तरबूज, टमाटर, अमरूद(पेरू) ,आलू, अनान्नास, हरी सब्जियाँ आदि।
विटामिन 'डी'	हड्डियों और दांतों के लिए आवश्यक है। शरीर के विकास के लिए भी आवश्यक है।	सूरज की किरणें सबसे अच्छा प्राप्ति स्थान है। दूध में भी होता है।
विटामिन 'इ'	प्रजननोत्पादन के लिए ये विटामिन अत्यन्त आवश्यक होता हैं। इसके अलावा खून के अंदर के लाल कणों को सुदृढ़ बनाते है और खून से अलग नहीं होते है।	दूध, हरी पत्तेदार सब्जियाँ, वनस्पति तेल, सूखे मेवे आदि।

तालिका नं. 2

अक्सर यह दलील दी जाती है कि अण्डे व माँस में प्रोटीन, जो शरीर के लिए आवश्यक तत्त्व हैं, अधिक मात्रा में पाया जाता है। किन्तु यह बात कितनी गलत है इससे साबित होती है कि सरकारी आँकड़ों के अनुसार ही 100 ग्राम अण्डों में जहाँ लगभग 13 ग्राम प्रोटीन होता है वही पनीर में 24 ग्राम और मूँगफली में 31 ग्राम और दूध से बने हुए पदार्थों में तो इससे भी अधिक प्रोटीन होता है। अब कैलोरी की बात लीजिए। जहाँ 100 ग्राम अण्ड़ों में लगभग 170 ग्राम कैलोरी व मुर्गे के गोश्त में 194 ग्राम कैलोरी प्राप्त होती है, वहीं दालों की इसी मात्रा में 330 कैलोरी, मूँगफली में 550 ग्राम कैलोरी और मक्खन निकले दूध एवं पनीर में 348 ग्राम कैलोरी प्राप्त होती है। फिर अण्डों की बजाय दालें आदि सस्ती भी हैं। अब कोलस्ट्रॉल की बात लीजिए। 100 ग्राम अण्डों में कोलस्ट्रॉल की मात्रा लगभग 550 मि.ग्रा. होती है और मुर्गी के गोश्त में 60 मि.ग्रा. है। तो वही कोलस्ट्रॉल सभी प्रकार के फलों सब्जियों, मूँगफली आदि में लगभग शून्य होता है।

प्रकार होने वाली कमी से हड्डी टूटने पर पुनः जुड़ने में अत्यधिक समय लगता है। अंडों में कोलस्ट्रोल भी बहुत ज्यादा होता है।

फल-फूल, हरी सब्जी, विभिन्न प्रकार की दालों, बीज, एवं दूध से बने पदार्थों आदि से मिलकर बना हुआ सन्तुलित आहार, भोजन में कोई जहरीले तत्व पैदा नहीं करता। उसका प्रमुख कारण यह है कि जब कोई जानवर मारा जाता है तो वह मृत पदार्थ बनता है, लेकिन यह बात सब्जी के साथ लागू नहीं होती। यदि किसी सब्जी को आधा काट दिया जाये और उसका आधा भाग जमीन में गाड़ दिया जाये तो वह पुनः सब्जी या पेड़ के रूप में उग जायेगी। यह इसलिये सम्भव है, क्योंकि वह एक जीवित पदार्थ हैं । यहीं बात एक भेड़, मेमने या मुर्गे के लिये नहीं कही जा सकती। अन्य विशिष्ट स्रोतों से यह पता चला है कि जब किसी जानवर को मारा जाता है तब वह इतना भयभीत हो जाता है एवं उसके सारे अवयव विषमय हो जाते हैं। उस भय से उत्पन्न जहरीले तत्त्व माँस के रूप में उन व्यक्तियों के शरीर में पहुँचते हैं, जो उन्हें खाते हैं। हमारा शरीर उन जहरीले तत्त्वों को पूर्णतया निकालने में सामर्थ्यवान नहीं होता है।

भोजन में अम्ल क्षार का संतुलन आवश्यक :-

बहुत से चिकित्सक शरीर में रोग का कारण अम्ल क्षार का असंतुलन मानते हैं। उनकी ऐसी मान्यता है कि हमारे शरीर में लगभग 80 प्रतिशत क्षार तत्त्व और लगभग 20 प्रतिशत आम्लिक तत्त्व होते हैं। परन्तु हमारे भोजन में उनके अनुपात की तरफ प्रायः ध्यान नहीं दिया जाता। आहार विशेषज्ञों की ऐसी मान्यता है कि अधिकांश फल एवं सब्जियों के छिलकों में प्रायः क्षार तत्त्व अधिक और अन्दर के भाग में अम्ल तत्त्व ज्यादा होता है। अतः वे बिना छिलका उतारे खाद्य पदार्थों के खाने की प्रेरणा देते हैं। परन्तु आज के युग में रासायनिक खाद एवं कीटनाशकों के अत्यधिक प्रयोग से प्राप्त अनाज और सब्जियों में उस विष का अंश होने से बिना अच्छी तरह से पूर्ण साफ किये छिलके सहित आहार नुकसान का कारण भी बन जाता है।

कहने का आशय यही है कि भोजन के विषय में हमें एक पक्षीय चिन्तन को ही महत्त्व देने के बजाय अनेकान्त दृष्टि से सर्व पक्षीय चिन्तन करके, अपने स्वविवेक, मौसम एवं शारीरिक आवश्यकता के अनुरूप निर्णय करना चाहिये। परन्तु किसी भी हालत में प्रकृति के सनातन सिद्धान्तों की उपेक्षा नहीं होनी चाहिये।

भोजन में स्वाद संतुलन का महत्त्व :-

चीनी पंच तत्त्व के सिद्धान्तानुसार विभिन्न स्वादों का संबंध शरीर के अलग-अलग अंगों से होता है तथा उनका ऐसा मानना है कि खट्टे स्वाद लीवर और पित्ताशय, नमकीन स्वाद से गुर्दे और मूत्राशय, तीखे स्वाद का फेंफड़ों और बड़ी आंत, मधुर स्वाद का तिल्ली (स्पलीन) और आमाशय तथा कड़वे स्वाद से हृदय और छोटी आंत आदि अधिक प्रभावित होते हैं एवं संबंधित अंगों का पोषण भी करते हैं। स्वाद चिकित्सक भोजन में स्वाद का संतुलन ही स्वास्थ्य का आधार मानते हैं तथा भोजन में विभिन्न स्वादों का संतुलन कर उपचार करते हैं।

भोजन मौसम के अनुकूल होना चाहिए:-

जिस मौसम में जो वस्तु प्रकृति द्वारा सर्वाधिक प्राप्त होती है, वह खाद्य पदार्थ स्वास्थ्य की दृष्टि से प्रायः अच्छा होता है। अधिकांश पशु-पक्षी जो भोजन का संग्रह नहीं करते और स्वछन्द जीवन जीते हैं, तथा उपलब्ध फल, पत्तों के आधार पर ही अपना जीवन चलाते हैं। प्रकृति प्रत्येक प्राणी को स्वस्थ रखने हेतु अपना पूर्ण सहयोग देती है।

जिस वातावरण और स्थान पर हम रहते हैं, हमारे लिये आवश्यक सभी खाद्य पदार्थों का उत्पादन प्रकृति द्वारा उस क्षेत्र में पैदा करने की क्षमता होती है। सभी जीव जन्तु वही खाते हैं, जो उनके आसपास उपलब्ध होता है। वे कोई खाद्य पदार्थो का अन्य स्थानों से आयात नहीं करते। अतः जिस मौसम में जो फल, सब्जियॉ और अन्य खाद्य पदार्थ सहज और सरलता से भरपूर मात्रा में उपलब्ध हों, वे सारे पदार्थ प्रायः स्वास्थ्य के अनुकूल होते हैं। प्रकृति के नियम और कानून गरीब और अमीर सबके लिये समान होते हैं। अतः महंगे, बेमौसमी, आयातित खाद्यान्न का सेवन स्वास्थ्य के लिये सदैव उपयोगी हो, पूर्णतः मिथ्याधारणा है।

संतुलित भोजन स्वयं दवा का कार्य करता है :-

आहार विशेषज्ञों को ऐसा मानना है कि अधिकांश शारीरिक रोगों का कारण भोजन संबंधी विसंगतियॉ, असावधानी, लापरवाही होती है, जिसका प्रमुख कारण सही भोजन के बारे में हमारा अज्ञान, स्वादलोलुपता, सम्यग् चिन्तन का अभाव, स्वविवेक की कमी, अनैतिक आचरण, स्वार्थी दृष्टिकोण इत्यादि होते हैं। विभिन्न चिकित्सा पद्धतियों में आहार के प्रति सजगता उपचार का आवश्यक भाग होता है। प्राकृतिक चिकित्सा में तो आहार को ही स्वस्थता और उपचार हेतु सर्वाधिक महत्त्व दिया जाता है।

प्राकृतिक चिकित्सकों और आहार विशेषज्ञों के दृष्टिकोण से भोजन ही औषधि है। अतः उनकी मान्यता के अनुसार रोगी का उपचार चिकित्सालय की अपेक्षा भोजनालय में होना चाहिए। बड़े-बड़े अनुभवी हृदय रोगों के चिकित्सक दवाओं के दुष्प्रभावों के कारण, मात्र संतुलित भोजन से हजारों हृदय रोगियों का सफल उपचार करने में सफल हुए हैं। स्वस्थ होने पर भोजन पोषण और रोग को दूर करने के लिए औषधि का कार्य करता है।

शरीर के लिए जो, अपाच्य, अभक्ष्य, अखाद्य अनावश्यक पदार्थो का खाना, पेट को कचरा पेटी बनाना है। गलत आहार जितनी सरलता से गले के नीचे उतर जाता है, उतनी सहजता से उसके अपाच्य तत्व, पेट से बाहर नहीं निकल पाते। इस कारण व्यक्ति अज्ञान और अविवेक के कारण स्वयं गलती करता है और रोग को गले लगाता है। ऐसे मानव क्या स्वयं के प्रति ईमानदार कहें जा सकते हैं ?

हमारी जीवन शैली और भोजन हेतु पराधीनता :-

भारत के नागरिकों का खान-पान, मौसम की विविधता, विभिन्न भौगोलिक परिस्थितियाँ, पारिवारिक और सामाजिक संरचना में अनेकता होने तथा रीति-रिवाजों, त्यौहारों, अलग-अलग उपासना पद्धतियों का समन्वय होने से एक जैसा भोजन प्रायः संभव नहीं होता। परन्तु पाश्चात्य संस्कृति में प्रायः इतना बदलाव नहीं होता। हमारी दिनचर्या और जीवन शैली विदेशियों से मेल नहीं खाती। अतः भोजन में उनका अन्धाःनुकरण स्वास्थ्य के सदैव अनुकूल हो आवश्यक नहीं।

अधिकांश स्वस्थ व्यक्तियों को सावधानी रखते हुए वही भोजन लेना पड़ता है जो घर अथवा भोजनालयों में बनता है। रोग की अवस्था में तो रोगी के आहार की तरफ प्रायः विशेष सावधानी रखी जाती है। घर में प्रत्येक परिजन की शारीरिक आवश्यकतानुसार प्रायः भोजन नहीं बनता। अतः भोजन करते समय भोजन के अवयवों के बारे में व्यर्थ चिन्तन नहीं करना चाहिये। जिससे व्यर्थ तनाव और चिंता होती है। जो भोजन में उपलब्ध पौष्टिक तत्त्वों की कमी से ज्यादा हानिकारक होती है। अतः उपलब्ध भोजन को शांत भाव से, स्वविवेक एवं सजगता पूर्वक ग्रहण करना ही अधिक लाभप्रद होता है।

शरीर के अनुकूल खाद्य पदार्थो के परीक्षण की विधि :-

प्रायः हम अनुभव करते है कि सभी व्यक्तियों को सभी वस्तुएँ अनुकूल नहीं होती। किसी को किसी वस्तु से एलर्जी होती है अथवा ताकत मिलती है, जबकि उसी पदार्थ से अन्य व्यक्ति में वैसा लाभ नहीं होता। किसी को दूध लाभप्रद होता है, जबकि किसी अन्य को दूध का पाचन भी कठिन होता है। ऐसा क्यों ?प्रत्येक व्यक्ति के शरीर में उपलब्ध अवयवों की मात्रा का अनुपात अलग-अलग होता हैं ? जो पदार्थ किसी मौसम में लाभप्रद हो, अन्य मौसम में हानिकारक भी हो सकता है।

दुनियाँ में कोई दो व्यक्ति पूर्णरूप से समान नहीं हो सकते। प्रत्येक की आवश्यकताएँ अलग होती है। अतः कम से कम जो पदार्थ हानिकारक हों, अनुपयोगी हों, उनकी जानकारी आवश्यक होती है।

कौनसी वस्तु किसके लिये कब, कितनी लाभप्रद अथवा हानिकारक होती है, यदि इस बात का पता चल जायें, तो अनुपयोगी पदार्थो के सेवन से सहज ही बचा जा सकता है, जो स्वास्थ्य के लिये परमावश्यक है।

आज का युग तरंगों के प्रभाव से पूर्ण परिचित है। प्रत्येक पदार्थ से उसके गुण धर्म के आधार पर तरंगें निकलती है। यदि इन तरंगों से शरीर की ताकत बढ़ती है तो वे पदार्थ हमारे लिये उपयोगी होते हैं। परन्तु जो तरंगे हमारी शक्ति धटाती है, वे पदार्थ हमारे लिये अनुपयोगी होते हैं। जो व्यापारी अपने व्यवसाय में हेराफेरी करते हैं, यदि उनके दूकान के बाहर कोई इंकमटेक्स अथवा सेल्स टेक्स आफिसर की गाड़ी ठहरती है तो, उन्हें तनाव क्यों हो जाता है ?पुलिस को देखते ही अपराधी क्यों घबराने लगते हैं ?जितना प्रेम माता को अपने बच्चे से होता है, भले ही उसका रूप कैसा ही क्यों न हो, उतना प्रेम अन्य बच्चों से क्यों नहीं होता ? हमारे शरीर के चारों तरफ आभा मंडल अथवा चुम्बकीय क्षेत्र होता है। जिस पदार्थ की तरंगें उस आभा मंडल के अनुकूल होती है, उसे शक्तिशाली बनाती है, वे वस्तुएँ और प्रवृत्तियाँ मानव के लिए हितकारी होती हैं। परन्तु जिन तरंगों से आभा मंडल विकृत और अशुद्ध बनता है, वे पदार्थ हमारे लिए अनुपयोगी होती हैं। जिस वस्तु की आवश्यकता होती है, उसकी प्राप्ति पर प्रसन्नता क्यों होते हैं ? जो वस्तु आवश्यक न हों, हानिकारक हों, उसको हम स्वीकार नहीं करते। ठीक उसी प्रकार जिस पदार्थ की तरंगे हमारे आभा मंडल अथवा शरीर के चारों तरफ स्थित चुम्बकीय क्षेत्र को ताकतवर बनाती हैं, वे पदार्थ हमारे लिये उपयोगी होते हैं तथा जो तरंगे शरीर की तरंगों से मिल उसके प्रभाव को कम कर देती हैं, वे पदार्थ हमारे लिये उपयोगी नहीं हो सकते है ? इसी सिद्धान्त के आधार पर हम खाद्य पदार्थों एवं दवाओं का परीक्षण कर सकते हैं।

प्रयोग– एक वजन करने वाली मशीन लें। फिर अपनी बायीं हथेली को हृदय की धड़कन वाले स्थान से स्पर्श कर, दूसरी हथेली से वजन करने वाली मशीन पर जितना ज्यादा से ज्यादा दबाव दे सकते हैं दें, और अपनी ताकत को मशीन से माप लें। अब जो वस्तु अथवा दवा जिसका परीक्षण करना है, उसे बायीं हथेली में लेकर अथवा कागज में लेकर पुनः धड़कन वाले स्थान पर हलका सा दबाव से स्पर्श करें। तरल पदार्थ का परीक्षण करना हों तो कांच के बर्तन में लेकर धड़कन वाले स्थान पर स्पर्श करें तथा दाहिनी हथेली को पहले की भांति वजन तोलने वाली मशीन पर अधिकतम दबाव देकर पुनः अपनी ताकत का माप करें। अगर आपकी

ताकत में वृद्धि होती है तो जिस वस्तु का आप बायें हाथ में परीक्षण कर रहे हैं, वह वस्तु आपके लिये स्वास्थ्यवर्द्धक होती है। परन्तु इसके विपरित यदि आपकी शक्ति पहले से कम होती है तो, वह खाद्य वस्तु खाना हानिकारक होता है। हमारा हृदय शरीर में सबसे संवेदनशील अंग है तथा उसकी धड़कन बायीं हथेली में जो पदार्थ है, उनसे निकलने वाली तरंगों के लिए एण्टिना का कार्य करती है। जिन खाद्य पदार्थों की तरंगें खाद्य पदार्थ के पेट में जाने से पहले ही व्यक्ति की ताकत घटा दें, उन खाद्य पदार्थों और दवाईयों का सेवन निश्चित् रूप से हानिकारक होता है। यह प्रयोग करते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि परीक्षण करते समय हमारे शरीर की स्थिति एक जैसी ही होनी चाहिए। दोनों समय मशीन पर एक जैसा अधिकतम दबाव डालना चाहिए। अलग-अलग दबाव डाला गया अथवा शरीर की स्थिति **(Posture)** को बदला गया तो इस प्रयोग के परिणाम प्रामाणिक नहीं होंगे।

भोजन स्वयं के अनुकूल होना चाहिए :–

प्रत्येक व्यक्ति की शारीरिक संरचना एक सी नहीं होती। किसी को कुछ अनुकूल होता है तो किसी को अन्य पदार्थ। रोगग्रस्त अवस्था में तो साधारण पौष्टिक भोजन भी अनुकूल नहीं होता। अतः जिसको जैसा सात्विक एवं पोष्टिक भोजन अनुकूल हों, वैसा भोजन करना चाहिये। जिसका निर्णय व्यक्ति के स्वविवेक, खाद्य पदार्थो की उपलब्धता एवं अपनी क्षमता के आधार पर प्राथमिकता से करना चाहिए।

परन्तु आजकल स्वाद के वशीभूत हो मानव गंदी से गंदी वस्तुओं को खाते समय छानबीन नहीं करते। मात्र उस पर डाली गई सुगन्ध, आकर्षक पेकिंग, मन लुभावने भ्रामक विज्ञापनों से भ्रमित हो। स्वाद की लोलुपता के कारण स्वविवेक न होने से ग्रहण करते तनिक भी संकोच नहीं करते। पाचन हो या न हो खाना एक रिवाज बन गया है।

अधिकांश व्यक्ति जब मन में आता है, इच्छा होती है, यदि कोई आग्रह करता है अथवा जो अच्छा लगता है, खाने लग जाते हैं। खाने के बारे में अपना भला-बुरा नहीं सोचते। अतः आजकल जन्म नियन्त्रण **(Birth Control)**, मृत्यु नियन्त्रण **(Death Control)**, से भी ज्यादा आवश्यकता स्वाद और भोजन पर नियन्त्रण की है।

कच्ची हरी सब्जियाँ खाना आजकल हानिकारक भी हो सकता हैं :-

रसायनिक खाद से निर्मित एवं कीटनाशक दवाओं के उपयोग से अनाज व सब्जियाँ विषयुक्त हो जाती है। अतः ऐसी सब्जियों को सलाद के रूप में खाना हानिकारक हो सकता है। दूसरी बात सलाद पके हुए भोजन की अपेक्षा जल्दी खराब होता है। तीसरी बात कच्चा खाने से भावों में उत्तेजना आती है। इसी कारण जब किसी व्यक्ति पर क्रोध आता है तो कुछ क्रोधी व्यक्ति ''**कच्चा खा जाऊँगा**'' प्रायः ऐसा कह दिया करते हैं। अतः कम से कम सामूहिक भोजन में तो सलाद, खाना तर्क संगत नहीं लगता। वर्तमान परिस्थितियों में पका हुआ आहार कच्चे आहार की अपेक्षा देर से खराब होता है। अतः अपेक्षाकृत कम हानिकारक होता है। पकाने से आहार संस्कारित हो जाता है। अतः सलाद कैसा हो, उस पर चिंतन आवश्यक है ?

भोजन में स्वविवेक आवश्यक :-

स्वास्थ्य जो तन, मन और आत्मा के एक संतुलित, अनुशासित समन्वय का प्रतीक है कोई ऐसी वस्तु नहीं, जिसकों बाजार से खरीदा जा सकें अथवा उधार लिया जा सकें, या चुराया जा सकें। स्वस्थ रहना भी एक कला है, एक विज्ञान है, एक दृष्टि है, एक सोच और सम्यक् चिन्तन का प्रतिफल हैं। भोजन उसका महत्त्वपूर्ण पक्ष है। प्रत्येक चमकती वस्तु हीरा नहीं होती। ठीक उसी प्रकार भोजन के संबंध में भी आधुनिक वैज्ञानिकों और चिकित्सकों की सोच शत-प्रतिशत सही हो आवश्यक नहीं है, अतः उसका अन्धाःनुकरण नहीं करना चाहिए।

भोजन अहिंसक होना चाहिए :-

हमारे जीवन पद्धति का एवं संस्कृति का आधार रहा है हमारा आध्यात्मिक जीवन। आध्यात्मिक जीवन का आधार है योग। योग में विशेषकर राजयोग। पतंजलि ऋषि के अष्टांग योग में योग के आठ अंग बताए हैं। उनमें यम और नियम प्रमुख हैं। यमों में सबसे प्रथम यम ''अहिंसा'' अर्थात जीवदया। अर्थात् किसी भी जीव को प्रताड़ित कर कष्ट नहीं पहुँचाना और न उसे मारना। तब किसी जीव को मारकर खाने का तो प्रश्न ही नहीं उठता।

भोजन जीवन का आधार है। आधार हमेशा मजबूत होना चाहिए न कि मजबूरी, लापरवाही, अज्ञान अथवा अविवेकपूर्ण आचरण का। यह आवश्यक भी है और हमारे लिए चेतावनी भी है। हमें ऐसा आहार करना चाहिए जो पूर्णतः अहिंसक हो, अर्थात् किसी भी चेतनाशील जीव की हिंसा करके अथवा कष्ट देकर यथा संभव उपलब्ध न किया गया हो। प्रकृति का यह सनातन सिद्धान्त है कि, किसी को प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से दुःख, पीड़ा, कष्ट पहुँचाने वाले को उसका दुष्परिणाम भुगतना पड़ता है।

निर्दोषों का रक्त बहाना, मानवता का मान नहीं।
हिन्दू, मुस्लिम याद तुम्हें, क्या गीता और कुरान नहीं।।

अज्ञान दुःखों का मूल है। अधिकांश व्यक्ति अज्ञान, अविवेक एवं सद्चिन्तन के अभाव में जो भोजन करते हैं, उसे सही और अच्छा समझ कर ही करते हैं। वे अपनी खाने संबंधी आदतों को सही बतलाने के लिए विभिन्न कुतर्कों, अप्रसांगिक दृष्टांतों, घटनाओं एवं भ्रामक मायावी विज्ञापनों का आलम्बन लेते हैं। चन्द व्यक्तियों को पूर्व उपार्जित पुण्यों के प्रभाव से जब पद, पैसा, मन चाहा रूप, स्वास्थ्य, सत्ता आदि मिल जाती है तो वे धर्म-कर्म, पाप-पुण्य, हिंसा-अहिंसा आदि में विश्वास नहीं करते और अभिमान वश अपनी सारी सफलताओं का श्रेय स्वयं के परिश्रम को ही मानने लगते हैं।

कभी-कभी तुरन्त प्रतिफल न मिलने से वे कर्म सिद्धान्त के सनातन सत्य को स्वीकार नहीं करते। हमारे मानने अथवा न मानने से प्रकृति के सनातन सिद्धान्त नहीं बदल जाते। अपराध के प्रथम प्रयास में दण्डित न होने वाला, यदि अपराधवृत्ति को अच्छा समझे तो यह उसका अज्ञान, अविवेक और अदूरदर्शिता ही समझनी चाहिये।

ऐसे पूर्वाग्रसित व्यक्तियों को, अपने आपको सर्वश्रेष्ठ, सर्वशक्तिमान, सभ्य, प्रगतिशील समझने का भ्रम हो जाता है, जिसके कारण वे स्वच्छन्द, मायावी, स्वार्थी, घमण्डी, हिंसक, क्रूर, निर्दयी आचरण करते तनिक भी संकोच नहीं करते। स्वयं को तो सुई अथवा पिन की चुभन भी सहन नहीं होती, परन्तु स्वाद लोलुपता के कारण मांसाहार करते करुणा, दया, प्रेम, परोपकार, सहयोग, संवेदना, जैसे मानवीय गुणों का निःसंकोच त्याग कर देते हैं। लाखों रुपये में भी अपने शरीर के किसी अंग को न बेचने वाला अपने स्वाद पूर्ति के लिए बेचारे बेजुबान, बेबश, बेसहारा प्राणी की हत्या करते हैं, करवाते हैं और हिंसा करने वालों को प्रत्यक्ष-परोक्ष रूप से सहयोग देते हैं। जिन पशुओं का रोम-रोम मनुष्य जाति के लिए समर्पित है, जिसे खिलाना चाहिये, उसे ही

खाया जा रहा है। ऐसा मानव आकृति से भले ही मनुष्य हो, परन्तु प्रकृति से तो यह राक्षसों को भी लजाने वाला होता है। इसीलिए किसी कवि ने चुनौती के स्वरों में कहा है–

मत सता जालिम किसी को, मत किसी की हाय ले।
दिल के दु:ख जाने से जालिम, खाक में मिल जाएगा।।

भोजन को प्रभावित करने वाले अन्य तथ्य

भोजन बनाने हेतु सावधानियाँ:–

जो महिलाएँ मासिक धर्म में होती है, उनका आभामंडल विकृत हो जाता है। उनके सम्पर्क में आने वाले पदार्थ भी विकृत हो जाते हैं। इसी कारण हमारे यहाँ उस अवस्था में महिलाओं को भोजन बनाने और पीने के पानी के संग्रह वाले स्थानों के स्पर्श पर पहले पूर्ण प्रतिबंध था। परन्तु आजकल पाश्चात्य संस्कृति के अन्धा:नुकरण के परिणाम स्वरूप, अज्ञान और विवेक की कमी के कारण अधिकांश आधुनिक महिलाएँ उस नियम का प्राय: पालन नहीं करती। जिससे उनके द्वारा बनाया गया भोजन विकृत हो जाता है। जिस पर वर्तमान वैज्ञानिकों द्वारा किये गये निष्कर्षों के आधार पर सम्यक् चिन्तन और आचरण अनिवार्य है और उपेक्षा अनुचित है। दूसरी बात उबालने, मिक्सी में रस निकालने, फ्रीज अथवा कोल्ड स्टोरेज में रखने से खाद्य पदार्थों का प्राकृतिक स्वरूप बदल जाता है और पौष्टिक तत्त्वों में कमी आ जाती है। भोजन बनाते समय भी आजकल स्टील, एलुमिनियम और प्लास्टिक के बर्तनों का प्रयोग अधिक होता जा रहा है। जिससे भोजन में हानिकारक, रासायनिक पदार्थो के मिश्रित होने की संभावना बढ़ जाती है। ऐसा भोजन शरीर में रोग प्रतिरोधक क्षमता घटाता हैं। सूर्य ऊर्जा से तैयार भोजन, गैस अथवा अन्य विधि द्वारा बनाये भोजन से अधिक पोष्टिक और स्वास्थ्यवर्द्धक होता है।

एलुमीनियम थोड़ी सी गर्मी पाकर गलने लगता हैं और खाद्य पदार्थों के साथ पेट में जब पहुँच जाता है तो, अपाच्य विकार पैदा करता है, जिससे गुर्दे में पत्थरी और आंतों में खराबी होने की संभावनाएँ बढ़ सकती है। अत: यथा संभव एलुमीनियम के बर्तनों का उपयोग खाना बनाने में नहीं करना चाहिए। परन्तु आजकल प्राय: घरों में कूकर, ओवन आदि एलुमीनियम के बर्तन ही भोजन बनाने के कार्य में लिए जाते हैं, जो उचित नहीं है।

भोजन में दृष्टि दोष :–

भोजन में स्पर्श दोष की भांति, दृष्टि दोष का भी प्रभाव पड़ता है। हमारे पौराणिक ग्रन्थों के अनुसार भोजन पर भूखे, नीच, दरिद्र, पाखण्डी, रोगी आदि की दृष्टि ठीक नहीं होती। उनकी विष दृष्टि भोजन में संक्रमित होने से भोजन अपाच्य बन जाता है। अच्छी या बुरी दृष्टि में कितनी शक्ति होती है, उसको आजकल सम्मोहन विद्या द्वारा प्रमाणित किया जा चुका है।

भोजन कब करना चाहिये

कोई बीज कितना ही अच्छा क्यों न हो, अच्छी उपजाऊ जमीन पर बोया जावे, उचित हवा, पानी, धूप होने के बावजूद उचित समय पर न बोने से नहीं उगता। ठीक उसी प्रकार भोजन, पानी, हवा, निद्रा आदि का बराबर ख्याल रखने के बावजूद उचित समय पर सेवन न करने से वे अपेक्षाकृत लाभदायक नहीं होते। राम का नाम सत्य है, परन्तु शुभ प्रसंगों पर भी राम नाम सत्य है कहना अप्रासंगिक समझा जाता है। अत: हमारी दिनचर्या का चयन इस प्रकार करना चाहिये कि शरीर के अंगों की क्षमताओं का अधिकतम उपयोग हो।

स्वस्थ रहने की कामना रखने वालों को शरीर में कौनसा अंग और क्रियायें कब विशेष सक्रिय रहती है, इस बात की जानकारी आवश्यक होती है, और उसके अनुरूप आचरण करना चाहिये। हमें चिन्तन करना होगा कि कोई भी शारीरिक अथवा मानसिक क्रिया और कार्य क्यों करें ?कितना करें ? कहाँ करें ? इन सबके साथ–साथ यह भी आवश्यक है कि यह क्रिया कौन से समय करें ? जैसे भोजन कब करें ? निद्रा कब लें ? पानी कब पीयें ? व्यायाम कब करें इत्यादि ? प्रकृति के अनुरूप दिनचर्या का निर्धारण और संचालन करने से शारीरिक क्षमताओं का अधिकाधिक उपयोग होता है। हम रोगों से सहज ही बच जाते हैं, यदि अज्ञानवश रोग ग्रस्त हो भी जावें तो पुन: शीघ्र स्वस्थ बन सकते हैं।

दु:ख इस बात का है कि आज अधिकांश व्यक्तियों की दिनचर्या प्रकृति के अनुरूप नहीं हैं और न वे इसके प्रभाव एवम् महत्त्व को समझने का भी प्रयास करते हैं। अज्ञान, अविवेक, पूर्वाग्रहों, कुतर्कों, मायावी विज्ञापनों, सरकारी और सामाजिक

व्यवस्थाओं के अन्धा:नुकरण के कारण प्रकृति के साथ जनसाधारण का सही सामंजस्य नहीं होता है। परिणाम स्वरूप भोजन के समय नाश्ता और निद्रा के समय जागृत रहने जैसी, आदतों को संजोये हुये हैं। हम उनके दुष्प्रभावों से अपरिचित हैं।

हम यह भूल जाते हैं कि जिसमें प्रकृति के विरुद्ध चलने की ताकत न हो, वह कम से कम प्रकृति का सहयोग तो लें। तूफान का सामना करने की क्षमता न हों तो कम से कम हवा की दिशा में तो चले ताकि कम कठिनाई का अनुभव हो। शरीर में जिस समय जो अंग सर्वाधिक सक्रिय हों, उस समय उस अंग से संबंधित कार्य एवं क्रियाएँ करें। दूसरी बात जिस समय किसी अंग में प्रकृति से प्राण ऊर्जा का प्रवाह सर्वाधिक हो, यदि उस समय दूसरे अंगों के कार्य और क्रियायें करते हैं तो संबंधित अंग प्रकृति से प्राप्त अपने हिस्से की विशेष प्राण ऊर्जा (चेतना) से वचिंत रह जाता है। जैसे नगर निगम से पानी के वितरण के समय, जो पानी का संग्रह नहीं करता है, उसको बाद में पानी की आवश्यकता पड़ने पर पछताना पड़ता है।

शरीर के प्रमुख अंगों में प्रकृति से सर्वाधिक एवं निम्नतम ऊर्जा के प्रवाह का समय

	अंगों का नाम	अंग में प्राण ऊर्जा के सर्वाधिक प्रवाह का समय	प्राण ऊर्जा के निम्नतम प्रवाह का समय
1.	फेंफड़ें (LU)	प्रातः 3 से 5 बजे तक	दोपहर 3 बजे से 5 बजे तक
2.	बड़ी आंत (LI)	प्रातः 5 से 7 बजे तक	सांयकाल 5 बजे से 7 बजे तक
3.	आमाशय (ST)	प्रातः 7 से 9 बजे तक	सांयकाल 7 बजे से 9 बजे तक
4.	तिल्ली(SP)/पेनक्रियाज	प्रातः 9 से 11 बजे तक	रात्रि 9 बजे से 11 बजे तक
5.	हृदय (H)	प्रातः 11 से 1 बजे तक	रात्रि 11 से 1 बजे तक
6.	छोटी आंत (SI)	दोपहर 1 से 3 बजे तक	रात्रि 1 से 3 बजे तक
7.	मूत्राशय (UB)	दोपहर 3 से 5 बजे तक	रात्रि 3 से 5 बजे तक
8.	गुर्दे (K)	सांयकाल 5 से 7 बजे तक	प्रातः 5 से 7 बजे तक
9.	पेरीकार्डियन (PC)	रात्रि 7 से 9 बजे तक	प्रातः 7 से 9 बजे तक
10.	त्रिअग्नी (TW)	रात्रि 9 से 11 बजे तक	दिन में 9 से 11 बजे तक
11.	पीन्ताशय (GB)	रात्रि 11 से 1 बजे तक	दोपहर 11 से 1 बजे तक
12.	लीवर (LIV)	रात्रि 1 से 3 बजे तक	दोपहर 1 से 3 बजे तक

भोजन करने का उचित समय :-

जब हमें स्वाभाविक अच्छी भूख लगे तब ही भोजन करना चाहिए। भूख का संबन्ध हमारी आदत पर निर्भर होता है। जैसी हम आदत डालते हैं, हमें उस समय भूख लगने लग जाती है। अतः हमें भोजन की ऐसी आदत डालनी चाहिए कि जब आमाशय अधिक सक्रिय हो, उस समय हमें तेज भूख लगे। दूसरी बात जब तेज भूख लगे तो कुछ खाकर आमाशय की पूर्ण क्षमता का अपव्यय नहीं करना चाहिये। यदि ऐसा किया गया तो मुख्य भोजन के समय आमाशय भी पाचन के प्रति उदासीन हो जाए तो आश्चर्य नहीं।

प्रमुख अंगों में प्राण ऊर्जा के अधिकतम प्रवाह को दर्शाता प्रतिदिन का समय चक्र

जितना अच्छा भोजन का पाचन प्रातःकाल में होता हैं उतना अन्य समय में नहीं होता। प्रातः व्यक्ति अपेक्षाकृत शान्त, तनाव मुक्त, षड्यंत्रों तथा उलझनों से मुक्त रहता है। अतः भोजन के समय में भी नियमितता रखी जा सकती है।ऐसे समय किया गया भोजन, अधिक सुपाच्य होता है और अमृत का कार्य करता है। विशेष रूप से मधुमेह का रोग जिसे असाध्य माना जाता है, प्रकृति के समयानुकूल जब आमाशय में प्राण ऊर्जा का प्रवाह सर्वाधिक हों, भोजन कर ठीक किया जा सकता है।

इसीलिये तो लोकोक्ति प्रसिद्ध है-

"Take the morning meal like a king, afternoon lunch like a queen & evening dinner like a begger"

अर्थात् प्रातः पूरा भरपेट खाना खाओ, दोहपर में आवश्यकता हो तो हल्का पाच्य खाना खाओं और रात में भिखारी की भांति कभी मिल जाये तो खा लो अन्यथा अपने आपको संयमित रखें। आज अधिकांश रोगों की जड़ प्रायः पेट होता हैं। अतः अपने समस्त पूर्वाग्रहों को छोड़ भोजन करने के सही समय का महत्त्व समझना चाहिये।

आयुर्वेद के सिद्धान्तानुसार प्रातः 10 बजे तक का समय शरीर में कफ प्रकृति का होता है और दिन में 10 से 2 बजे तक का समय लगभग पित्त प्रकृति का होता है। अतः हमेशा भोजन कफ प्रकृति में करना चाहिये। कफ प्रकृति में भोजन करने के बाद पित्त प्रकृति का समय होने से पाचन में मदद मिलती है। बाहर वातावरण में भी धूप निकलने से गर्मी बढ़ने लगती है। शरीर की गतिविधियाँ सक्रिय होने से पाचन आसानी से हो जाता है। इसीलिये हमारे यहाँ एक अन्य लोकोक्ति भी प्रसिद्ध है-

''सुबह का खाना खुद खाओं, दोपहर का दूसरों को खिलाओं, और रात्रि का खाना दुश्मनों को खिलाओं।''

नाश्ता अधूरा आहार होता है और जब हम आंशिक आहार का पाचन आमाशय की सर्वाधिक क्षमता के समय करते हैं तो, जब हमारा मुख्य भोजन होता है, तब आमाशय की पाचन क्षमता इतनी अधिक न होने से उसे अधिक श्रम करना पड़ता है। दूसरी बात प्रातःकाल नाश्ता करने से हमें भूख समय पर नहीं लगती। फलतः ऐसे व्यक्ति प्रायः दोपहर में भोजन करते हैं।

आधुनिक खान-पान के समय की एक और विसंगति है कि जब शरीर श्रम करता है, तब उसे कम कैलारी वाला आहार दिया जाता है और जब वह रात्रि में विश्राम की अवस्था में होता है तो उसे अधिक मात्रा में कैलोरीयुक्त आहार दिया जाता है। जैसे दिन का समय जो मेहनत परिश्रम का होता है और रात्रि में जो विश्राम का समय होता है, सामूहिक भोजों में प्रायः गरिष्ठ भोजन किया जाता है, जो स्वास्थ्य के मूल सिद्धान्तों के विपरीत होता है।

रात्रि भोजन क्यों हानिकारक ?

मच्छर रात्रि में ही क्यों प्रायः अधिक काटते हैं?क्या कभी हमने चिन्तन किया?सूर्यास्त होने के पश्चात् शरीर की प्रतिरोधक शक्ति क्यों कम हो जाती है?ऊर्जा शक्ति की हानि होने से रात्रि में किया गया भोजन कैसे शक्तिवर्द्धक हो सकता है?

सूर्य की रोशनी से शरीर में रोग-प्रतिकारक शक्ति बढ़ती है। इसी कारण प्रायः अधिकांश रोगों का प्रकोप रात में बढ़ने लगता है। प्रत्येक बीमारी भी अपेक्षाकृत रात में ज्यादा कष्टदायक होती है। इसका मुख्य कारण रात में सूर्य की गर्मी का अभाव होता है।

हमारे शरीर में सारे ऊर्जा चक्र जिन्हें कमल की उपमा दी गयी है, सूर्योदय के साथ सक्रिय होते हैं और सूर्यास्त के पश्चात् असक्रिय होने लगते हैं। अतः रात्रि में भोजन का पाचन कठिनाई से होता है। आयुर्वेद में स्पष्ट कहा गया है कि पहला मुख्य भोजन सूर्योदय से एक प्रहर बाद ही किया जाना चाहिये और दूसरा भोजन यदि आवश्यक हो तो सूर्यास्त से कम से कम एक घंटा पूर्व। उनका निष्कर्ष है कि दिन क्षय के अनुपात में वायु और पित्त बढ़ जाते हैं।

चरक संहिता के अनुसार रात्रि भोजन दूषित, तामसिक और अम्लीभूत होकर शरीर को भारी क्षति पहुँचाता है।

सूर्यास्त के पश्चात् बहुत से सूक्ष्म जीव पैदा हो जाते हैं। सूर्य का प्रकाश इन कीटाणुओं को पैदा होने से रोकता है। सूर्य के ताप में अनेक विषैले कीटाणु निष्क्रिय बन जाते हैं, जो सूर्यास्त के बाद पुनः सक्रिय होने लगते हैं। प्रायः हम अनुभव करते हैं कि, दिन में 1000 वाट के बल्ब के पास भी सूक्ष्म जीव नहीं आते, जबकि रात में थोड़ी सी रोशनी में भी बल्ब के आसपास मच्छर मंडराने लगते हैं। ये जीव आहार की गन्ध के कारण भोज्य पदार्थों की तरफ आकर्षित होते हैं। वहीं दूसरी तरफ भोजन में भी अनेक सूक्ष्म बेक्टीरियाँ उत्पन्न हो जाते हैं। इनका रंग भोजन के रंग जैसा ही होने से कृत्रिम प्रकाश में हम इन्हें प्रायः नहीं नहीं देख पाते हैं। कृत्रिम प्रकाश में उजाला तो है, परन्तु वह सूर्य की बराबरी नहीं कर सकता। पूर्ण शाकाहारियों के लिये यह भोजन निश्चित रूप से त्याज्य होता है। रात्रि में तमस (अँधेरे) के कारण वैसे भी भोजन तामसिक बन जाता है। रात्रि भोजन में स्मरण शक्ति कमजोर होने लगती हैं। व्यक्ति अपनी क्षमताओं को पूर्ण रूपेण विकसित नहीं कर पाता।

बिजली की रोशनी में भोजन करने से अंधेरे के कीटाणु तो हमारे भोजन के नजदीक आते ही हैं परन्तु साथ में प्रकाश के किटाणु और नये उत्पन्न होते हैं, जो भोजन में सम्मलित हो जाते हैं, तथा जो स्वास्थ्य बिगाड़ने में सहायक होते हैं।

कहने का आशय यही है कि प्रकृति के नियम व्यक्तिगत अनुकूलताओं के आधार पर नहीं बदलते। हमारी जीवन पद्धति के अनुरूप सूर्योदय और सूर्यास्त का समय निश्चित् नहीं होता । बुद्धिमान वहीं है जो प्रकृति के अनुरूप अपने आपको ढाल लेता है। परन्तु आज हमारे दिल और दिमाग में ये बाते नहीं बैठ पा रही है। हमारे **Lunch** और **Dinner** रोगों के मंच बनते जा रहे हैं।

स्वास्थ्य मंत्रालय को पूर्वाग्रह छोड़ इस सत्य को स्वीकार करना चाहिये तथा भोजन के उपयुक्त सर्वोत्तम समय की जानकारी जन साधारण तक पहुँचानी चाहिये। सारी सामाजिक एवं सरकारी व्यवस्थाओं को उसके अनुरूप बदलने की पहल करनी चाहिये। यदि उचित समय पर भोजन न किया जाए तो हमें हमारी पाचन क्रिया को अच्छा रखने के लिये बाह्य साधनों का उपयोग करना पड़ेगा।

कहने का तात्पर्य यह है कि रात्रि भोजन आरोग्य के साथ वैज्ञानिक, आध्यात्मिक, सामाजिक एवं पारिवारिक दृष्टिकोण से अनुपयोगी है। हानिकारक है। प्रकृति के विरुद्ध है। अतः स्वास्थ्य प्रेमियों के लिये त्याज्य है तथा उन्हें यथा सम्भव दिन में सूर्यास्त से पूर्व ही भोजन करने का प्रयास करना चाहिये।

पाचन तंत्र को आराम हेतु उपवास :-

परिश्रम के पश्चात् शरीर को आराम की आवश्यकता होती है। व्यवसाय जगत् में भी सप्ताह में कम से कम एक दिन अवकाश का कानूनी प्रावधान होता है। अवकाश के समय अपूर्ण कार्यो को पूर्ण किया जा सकता है ताकि भविष्य में अधिक उत्साह एवं शक्ति से नियमित कार्यो को किया जा सके।

प्रायः जनसाधारण को जैसे सुपाच्य, पौष्टिक भोजन की आवश्यकता होती है, उसके स्थान पर अधिकांश व्यक्ति स्वाद और भूखवश अपाच्य, स्वास्थ्य के लिये अनुपयोगी, हानिकारक पदार्थों का सेवन करने में पूर्णतया विवेक नहीं रखते। फलत: पाचन तंत्र को उन पदार्थो को पचाने के लिये सदैव क्षमता से अधिक कार्य करना पड़ता है। उनको आराम नहीं मिलता। परिणामस्वरूप उनकी क्षमता क्षीण होने लगती है। पाचन तंत्र में विकार जमा होने लगता है, जिससे रक्त में भी विकार बढ़ जाते हैं।

आहार और निद्रा बढ़ाने से बढ़ सकते हैं और घटाने से घटते हैं। ज्यों-ज्यों आहार बढ़ेगा त्यों-त्यों निद्रा भी बढ़ती है। हम उतना ही भोजन करें जिसका आसानी से पाचन हो सके। अजीर्ण होने पर भोजन का त्याग करें। रोग की अवस्था में भोजन रोग को जीवित रखता है और रोगी को मारता है, जबकि उपवास रोग को दूर करता है और रोगी को जीवित रखता है। उपवास से पाचन तंत्र को आराम मिलता है। शरीर में पड़े अपाच्य आहार का पाचन होता है और शरीर की सफाई होती है।

उपवास में आहार का त्याग करने से आमाशय खाली हो जाता है तथा जठराग्नि के रूप में जो प्राण ऊर्जा आहार को पचाने में कार्य करती है उसका उपयोग पाचन तंत्र को सफाई में लग जाता है, जिससे रक्त भी शुद्ध होने लगता है तथा शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ने लगती है। जैसी कहावत है- ''पेट साफ तो सब रोग माफ''। अतः नियमित रूप से कम से कम सप्ताह में एक दिन उपवास करने वालों को पाचन संबंधी रोग होने की अपेक्षाकृत कम संभावनाएँ रहती है। आहार शरीर को आवश्यक ऊर्जा और गर्मी प्रदान करता है जबकि उपवास शरीर को आरोग्य और शुद्धि प्रदान करता है। अधिकांश पशु-पक्षी स्व स्फूर्णा से रोग होने पर सर्व प्रथम आहार का त्याग करते हैं। रोगावस्था में आहार न करने से रोगी नहीं रोग भूखों मरता है। बीमारी में तो किया गया आहार विशेष रूप से रोगी का नहीं, अपितु रोग का पोषण करता है। अतः नियमित रूप से उपवास करने वाला स्वस्थ तथा पाचन संबंधी रोग के समय आहार का त्याग करने वाला जल्दी स्वस्थ होता है।

भोजन कैसे करना चाहिये

भोजन को चबा-चबा कर करना चाहिये:-

हम भली भांति जानते हैं कि जिस फुटबाल अथवा हाकी की टीम में यदि गोल रक्षक कमजोर हो, वह टीम मैच तभी जीत सकती है, जबकि आगे के खिलाड़ी अधिक मजबूत, सजग, सक्रिय हों, ताकि गोलरक्षक तक फुटबाल कम से कम पहुँचे। ठीक उसी प्रकार यदि हम दांतों का कार्य आमाशय से करवाते हैं, तो आमाशय को भोजन पचाने के लिए अधिक श्रम करना पड़ता है, अधिक पाचक रसों की आवश्यकता होती है। परन्तु शरीर सीमित मात्रा में ही पाचक रस भेजता है। परिणामस्वरूप पाचन बिगड़ने लगता है। अतः स्वास्थ्य प्रेमियों को दांतों का कार्य दांतों से ही करना चाहिए न कि आमाशय से। अर्थात् भोजन को पूर्ण चबा-चबा कर कर ही खाना चाहिए।

बार-बार खाना हानिकारक :-

हमारे ऋषि मुनियों ने एकासन करने की जो बात कही, उसके पीछे यही उद्देश्य था कि मुँह में जब चाहे कुछ न डाला जाये। जो कुछ खाना हो एक या दो बार ही खाया जाये ताकि हमारे आमाशय को बाकी समय पूर्ण आराम मिल जाये। जब हम कोई भी पदार्थ मुँह में डालते हैं, चाहें उसकी मात्रा बहुत कम ही क्यों न हों, सारी पाचन व्यवस्था को सजग और सक्रिय होकर कार्य करना पड़ता है। जिस प्रकार किसी रेलवे फाटक पर कार्यरत चौकीदार को चाहे अकेला इंजिन उधर से निकले अथवा राजधानी एक्सप्रेस, फाटक बंद करने की प्रक्रिया में उसे कोई फरक नहीं पड़ता। किसी बस में चाहे एक यात्री हो अथवा पूरी बस भरी हो, बस चालक को कोई अन्तर नहीं पड़ता। पेट्रोल की खपत में भी बहुत ज्यादा अंतर नहीं पड़ता। इसी प्रकार जितनी अधिक बार मुँह में कुछ भी डाला जायेगा उतना पाचन अंगों को अधिक कार्य करना पड़ेगा। परिणामस्वरूप जब हमारा मुख्य भोजन होगा तब वे अपनी पूर्ण क्षमता से कार्य नहीं कर पाते। समय पर अच्छी स्वाभाविक भूख नहीं लगती। भोजन समय की नियमितता नहीं रहती। इसी कारण आज अधिकांश व्यक्तियों का पाचन प्रायः ठीक नहीं होता। जितनी कम बार खाया जायेगा, उतनी भूख अच्छी लगेगी और पाचन अच्छा होगा।

आज दुनियाँ में 80 प्रतिशत से अधिक व्यक्ति खाने का विवेक न होने अथवा ज्यादा खाने से बीमार होते हैं। इसीलिये तो कहा गया है कि **"More Dishes More Diseases"** अर्थात् **''जितना ज्यादा खाना उतने ज्यादा रोग।''** हमारे यहाँ लोकोक्ति प्रसिद्ध है- **''एक समय खाने वाला योगी, दो समय खाने वाला भोगी, तीन समय खाने वाला रोगी तथा उससे ज्यादा खाने वाला भविष्य में बनने वाला महारोगी।''** हम स्वयं आत्म निरीक्षण करें कि हम कौनसी श्रेणी में हैं। इसी कारण बाह्य रूप से भले ही हम अपने आपको स्वस्थ समझें हमारे शरीर में परोक्ष रूप से सैकड़ों रोग होते हैं।

भोजन के तुरन्त बाद पानी पीना हानिकारक :-

भोजन के तुरन्त पहले पानी पीने से भूख शान्त हो जाती है। बिना भूख भोजन का पाचन बराबर नहीं होता। खाना खाने के पश्चात् आमाशय में लीवर, पित्ताशय, पेन्क्रियाज आदि के स्राव और अम्ल के मिलने से जठराग्नि प्रदीप्त होती है। अतः प्राय जन साधारारण को पानी पीने की इच्छा होती है। परन्तु पानी पीने से पाचक रस पतले हो जाते हैं, जिसके कारण आमाशय में भोजन का पूर्ण पाचन नहीं हो पाता। फलतः भोजन से जो ऊर्जा मिलनी चाहिए, प्रायः पूर्ण नहीं मिलती। आहार के रूप में ग्रहण किये गये जिन पौष्टिक तत्त्वों से रक्त, वीर्य आदि अवयवों का निर्माण होना चाहिये नहीं हो पाता। अपाच्य भोजन, आमाशय और आंतों में ही पड़ा रहता है, जिससे मंदाग्नि, कब्जी, गैस आदि विभिन्न पाचन संबंधी रोगों की संभावना रहती है।

दूसरी तरफ अपाच्य भोजन को मल द्वारा निष्काषित करने के लिये शरीर को व्यर्थ में अधिक ऊर्जा की आवश्यकता होती है। अतः भोजन के पश्चात् जितनी ज्यादा देर से पानी पीया जाता है, उतना पाचन अच्छा होता है। भोजन के दो घंटे पश्चात् जितनी आवश्यकता हो खूब पानी पीना चाहिए, जिससे शरीर में पानी की कमी न हों।

भोजन के पश्चात् पानी पीना आवश्यक हो तो, जितना गर्म पानी पी सकते हैं, उतना गर्म पानी धीरे-धीरे घूंट-घूंट पीना चाहिए, जिससे आमाशय की गर्मी कम न हो। साथ ही धीरे-धीरे पीने से, पानी के साथ थूक मिल जाने से वह पानी पाचक बन जाता है।

भोजन शान्त चित्त एवं तनाव मुक्त वातावरण में करना चाहिए :-

अधिकांश व्यक्ति प्रायः शान्त, प्रसन्नचित्त, एकाग्रता से मौन पूर्वक खाना नहीं खा सकते। भोजन करते समय सारा ध्यान भोजन में ही होना चाहिए, न कि कुछ देखने, सुनने, पढ़ने अथवा बातचीत करने में। बोलते रहने से मुँह में लार कम बनती है। फलतः मुँह सुखने लग सकता है। जिससे भोजन के बीच में पानी पीना पड़ता है। क्रोध अथवा अन्य किसी प्रकार के तनावमय वातावरण, टी.वी. देखते हुए, उतावले पन से, आवेग के समय भोजन नहीं करना चाहिये।

भोजन करते समय सावधानियाँ :-

भूख लगने पर खाना प्रकृति है। बिना भूख खाना विकृति है। भूखे को खिलाकर खाना हमारी संस्कृति है। शरीर में कान खुले हैं, आँखों पर भी साधारण पलकें है, नाक खुली है, परन्तु जीभ मुँह में बन्द है। बत्तीस पहरेदार हैं। जीभ की यह स्थिति बतलाती है कि उसके प्रयोग में विवेक की सर्वाधिक आवश्यकता है।

भोजन को तनाव रहित वातावरण में धीरे-धीरे चबा-चबा कर खाना चाहिये। जिससे भोजन में थूक और लार मिलने से उसका आंशिक पाचन मुँह में ही संपन्न हो सके। आमाशय को पाचन हेतु अधिक ऊर्जा एवं इंसुलिन की आवश्कता नहीं हो। इसी कारण चबा-चबा कर भोजन करना मधुमेह की सर्वोत्तम औषधि है।

भोजन मौसम एवं स्वयं की प्रकृति के अनुकूल पूर्ण सात्विक, पोष्टिक एवं सुपाच्य होना चाहिये। जिस भोजन को बनाने के लिये, उपयोग में आने वाले पदार्थों के निर्माण व तैयार खाद्य पदार्थो की सुरक्षा हेतु स्वास्थ्य को हानि पहुँचाने वाले रसायनिक पदार्थो का उपयोग होता हो, जैसे सफेद चीनी, सफेद गुड़, वनस्पति घी, रिफाइन्ड तेल आदि से निर्मित भोजन तथा बाजार में बिकने वाले अधिकांश तैयार खाद्य पदार्थ जैसे अचार, चटनियाँ, मुरब्बे, सौंस आदि अन्य खाद्य पदार्थो का उपयोग यथासंभव नहीं करना चाहिये। बाजार में उपलब्ध भोजन तथा कारखानों में निर्मित खाद्य पदार्थो में, घर में बने भोजन जैसी पवित्रता, स्वच्छता, विवेक एवं उच्च भावों का अभाव होने से, उस भोजन से मात्र पेट भरा जा सकता है, परन्तु शरीर के लिये आवश्यक अवयवों की पूर्ति नहीं होती, अपितु अपाच्य पदार्थों के विसर्जन हेतु शरीर को अधिक ऊर्जा खर्च करनी पड़ती है।

1. भोजन खड़े-खड़े नहीं करना चाहिए। क्योंकि उससे आमाशय को भोजन पचाने हेतु अधिक श्रम करना पड़ता है। यथासंभव भोजन पालकी आसन मैं बैठकर करना चाहिए।
2. भोजन करने से पूर्व अपने आराध्य का स्मरण, भोजन को नमस्कार तथा सुपात्र दान की भावना रखनी चाहिए।
3. भोजन को भगवान का प्रसाद समझ कर बिना किसी प्रतिक्रिया समभाव एवं आदरपूर्वक खाना चाहिए। प्रसाद भरपेट नहीं खाया जाता एवं आदरपूर्वक ग्रहण किया जाता है, उसी प्रकार भोजन भूख से कुछ कम एवं प्रसन्नतापूर्वक करना चाहिए।
4. भोजन विपरीत प्रकृति का नहीं हो। जैसे- दूध और दही, खट्टे और मीठे पदार्थ, अधिक ठण्डे और अधिक गर्म पदार्थ एक साथ नहीं खाना चाहिए।
5. जिन व्यक्तियों को अपना वजन कम करना हो उन्हें भोजन में रोटी को अलग तथा सब्जियों को अलग-अलग खाना चाहिए। अर्थात् पहले रोटियाँ खा लें। उसके पश्चात् खाली सब्जियाँ अलग से खानी चाहिए। दूसरी बात प्राकृतिक निहार के आसन में भोजन करने से मोटापा नहीं बढ़ता है। आज भी बहुत से ग्रामीण इसी प्रकार खाना खाते हैं, भले ही हमें वह उचित नहीं लगता हो।
6. भोजन में कड़वे स्वाद के अभाव में पाचन क्रिया मंद होने लगती है। रक्त की संघटना में परिवर्तन होने लगता है। कड़वा स्वाद मधुर स्वाद के दुष्प्रभावों को दूर करता है तथा रक्त शुद्धि में सहयोग करता है। स्वाद पर संयम मधुमेह का प्रभावशाली उपचार होता है।
7. केवल खाने से शक्ति नहीं आती। खाना खाकर उसे पचाने से ऊर्जा प्राप्त होती है। भोजन जितना ज्यादा अपोष्टिक व स्वादिष्ट होता है, उतनी ही मल में बदबू ज्यादा आती है। दुर्गन्ध रहित, बन्धा हुआ, कुछ सुखा, पानी पर तैरने वाला मल अच्छे पाचन क्रिया का प्रतीक होता है।
8. भोजन समभाव पूर्वक अर्थात् बिना किसी प्रतिक्रिया, निंदा अथवा प्रशंसा के साथ करना चाहिए।
9. भोजन का एक कण भी झूठा नहीं डालना चाहिए।
10. भोजन करने के पश्चात् ''आरुग्ग बोहि लाभं, समाहिवर-मुत्तमं दिन्तु'' अर्थात् ग्रहण किया गया भोजन मुझे आरोग्य, निर्मल बुद्धि एवं सम्यक् श्रद्धा का पात्र बनाये- ऐसा चिन्तन करना चाहिए।
11. हमारे आसपास जो उपस्थित हों, उन्हें भोजन का निमन्त्रण देकर भोजन करना चाहिए।
12. पूर्व दिशा में शक्ति के स्रोत सूर्य का उदय होता है। अतः पूर्व दिशा की तरफ मुख करके भोजन करने से भोजन की शक्ति बढ़ जाती है।
13. भोजन करते समय सूर्य स्वर चलना चाहिए, ताकि भोजन का पाचन अच्छा होता है।
14. भोजन में कम से कम पदार्थों का समावेश होना चाहिए। जिन पदार्थों को आपस में मिलाया जा सकता है, उन्हें मिलाकर खाना चाहिए ताकि भोजन करते समय बार-बार स्वाद में परिवर्तन न हों, अथवा एक ही प्रकार के पदार्थ एक साथ खाना चाहिए। फिर दूसरे पदार्थ को खाना चाहिए। हम अच्छी तरह जानते हैं कि जिस वाहन का गियर बार-बार बदला जाता है,

उस वाहन को ज्यादा ऊर्जा की आवश्यकता होती है। ठीक उसी प्रकार प्रत्येक कौर में स्वाद बदलने से भोजन के पाचन हेतु अधिक ऊर्जा की आवश्यकता होती है।

15. भोजन स्वच्छ, प्रदूषण रहित शान्त स्थान पर करना चाहिए।

भूख से कुछ कम भोजन करना चाहिए :-

आजकल अधिकांश व्यक्ति प्रायः भोजन शरीर की आवश्यकतानुसार नहीं करते अपितु मजबूरी और स्वाद की प्राथमिकता के अनुसार करते हैं। भोजन से न केवल स्वाद, अपितु शक्ति भी मिलनी चाहिए। हमें जीने के लिये भोजन करना चाहिए। परन्तु आजकल प्रायः हम भोजन के लिये जीते हैं, ऐसा समझा जावे तो आश्चर्य नहीं। शरीर को स्वस्थ रखने के लिए अधिक भोजन की आवश्यकता नहीं होती अपितु जो भोजन खाया जाता है उसका पूर्ण पाचन अधिक महत्त्वपूर्ण होता है। हमारे शरीर को जितना सीमित एवं पर्याप्त आवश्यक आहार मिलता है, उतना ही अधिक लाभ होता है। यदि आवश्यकता से अधिक भोजन किया जाये तो उसकी पाचन क्षमता कम हो जाती है। खाना हमारे लिए है, हम खाने के लिए नहीं है। अतः स्वस्थ रहने के लिए कम खाएँ - गम खाएँ का सिद्धान्त ही अपनाना चाहिए।

भोजन के पश्चात् हमारी स्फूर्ति बढ़नी चाहिए। शरीर हल्का लगना चाहिए। भोजन के पश्चात् भारीपन लगना, आलस्य या निद्रा आना, दुर्बल पाचन शक्ति के संकेत होते हैं। भोजन के पश्चात् निद्रा आने का कारण या तो आवश्यकता से अधिक भोजन अथवा ठण्डा बासी, तामसिक भोजन करना होता है, जिसको पचाने के लिए आमाशय को अधिक ऊर्जा की आवश्यकता होती है। परिणाम स्वरूप उस स्थिति में मस्तिष्क को आवश्यकता के अनुरूप ऊर्जा न मिलने से उसकी गतिविधि शिथिल हो जाती हैं और निद्रा आने लगती है।

मानव का आहार क्या हो?

मानव की शारीरिक संरचना शाकाहारी प्राणियों जैसी :-

1. मांसाहारी जीवों के दाँत नुकीले व पंजे तेज नाखून वाले होते हैं जिससे यह आसानी से अपने शिकार को चीर फाड़ कर खा सकें। शाकाहारी जीवों के दाँत चपटी दाढ़ वाले होते हैं। पंजे तेज नाखून वाले नहीं होते, जो चीर-फाड़ कर खा सकें, अपितु फल आदि आसानी से तोड़ सकने वाले होते हैं।
2. मांसाहारी जीवों के निचले जबड़े केवल ऊपर नीचे ही हिलते हैं और वे अपना भोजन बगैर चबाए ही निगलते हैं। शाकाहारी जीवों के निचले जबड़े ऊपर, नीचे, दाएँ-बाएँ सब ओर हिल सकते हैं और ये अपना भोजन चबाने के बाद निगलते हैं।
3. मांसाहारी प्राणियों की जीभ खुरदरी होती है। ये जीभ बाहर निकाल कर उससे पानी पीते हैं। शाकाहारी प्राणियों की जीभ चिकनी होती है, ये पानी पीने के लिये जीभ बाहर नहीं निकालते अपितु होठों से पानी पीते हैं।
4. मांसाहारी जीवों की आँतों की लम्बाई कम, करीब उनके शरीर की लम्बाई के बराबर और धड़ की लम्बाई से लगभग 6 गुनी होती है। आँतें छोटी होने के कारण, वे मांस के सड़ने व विषाक्त होने से पहले ही उसे शरीर से बाहर फेंक देती है। शाकाहारी जीवों की आँतों की लम्बाई अधिक, करीब-करीब उनके शरीर की लम्बाई से चार गुनी व धड़ की लम्बाई से लगभग 12 गुनी होती है। इस कारण वे मांस को जल्दी बाहर नहीं फेंक पाती।
5. मांसाहारी जीवों के यकृत व गुर्दे भी अनुपात में बड़े होते हैं ताकि मांस का व्यर्थ मादा आसानी से बाहर निकाल सकें। शाकाहारी जीवों के यकृत व गुर्दे भी अनुपात में छोटे होते हैं और मांस के व्यर्थ अपाच्य भाग को आसानी से बाहर नहीं निकाल पातें।
6. मांसाहारी जीवों के पाचक अंगों में शाकाहारियों के पाचक अंगों की अपेक्षा लगभग दस गुना अधिक हाइड्रोक्लोरिक एसिड होता है, जो मांस को आसानी से पचा देता है। शाकाहारी जीवों के पाचक अंगों में हाइड्रोक्लोरिक एसिड कम होता है व मांस को आसानी से नहीं पचा पाता।
7. मांसाहारी जीवों की लार अम्लीय होती है। शाकाहारी जीवों की लार क्षारीय होती है व उनकी लार में पटायलिन रसायन जो कार्बोहाइड्रेड्स को पचाने में उपयोगी होता है, पाया जाता है।

8. मांसाहारी जीवों की सूँघने की शक्ति तीव्र होती है, आँखे, रात्रि में चमकती हैं व रात में भी दिन की प्रकार देख पाती है। ये शक्तियाँ उसे शिकार करने में सहायक होती है। शाकाहारी जीवों में सूँघने की शक्ति उतनी तीव्र नहीं होती व रात में भी दिन की भांति देखने की शक्ति नहीं होती। शाकाहारी जीवों के पसीना अधिक आता है जबकि मांसाहारी प्राणियों के प्रायः पसीना नहीं आता।

मनुष्य की शारीरिक रचना जैसे आँखों की पुतलियाँ, गर्दन एवं आंतों का अनुपात, रक्त की रासायनिक स्थिति, पसीना होने की प्रक्रिया, रात में देखने की शक्ति, पानी पीने का ढंग, जबड़ों के हलन-चलन का तरीका, नाखून, दांत और दाढ़ों की रचना मांसाहारी जानवरों से भिन्न शाकाहारी जानवरों से मिलती जुलती होती है। अतः मानव प्रकृति से शाकाहारी प्राणी ही है। ब्रिटेन में शाकाहारी गायों को धोखें से मांसाहार कराने के दुष्परिणामों से सारा विश्व परिचित हो गया है। यह गाय का पागलपन है अथवा मनुष्य का पागलपन, समझाने की आवश्यकता नहीं।

मनुष्य प्रकृति से शाकाहारी है, मांसाहार उसे अनुकूल नहीं।
पशु भी मानव जैसे प्राणी हैं, वे मेवा फल फूल नहीं।।

जिस प्रकार पेट्रोल की गाड़ी डीजल अथवा केरोसीन से अधिक दिनों तक नहीं चलायी जा सकती। उसके अन्दर खराबी होने की अधिक संभावना रहती है। ठीक उसी प्रकार यदि मानव जिसके शरीर की संरचना शाकाहारी प्राणियों के लगभग समान होती है और वे मांसाहार करते हैं तो उनके रोगी बनने की संभावनाएँ बहुत अधिक बढ़ जाती है।

मांसाहारियों की श्रेणियाँ :-

कुछ व्यक्ति रोजाना मांसाहार करते हैं, तो कुछ सप्ताह, अथवा महिने में कभी-कभी। कोई भी व्यक्ति पूर्णतः मांसाहारी तो हो ही नहीं सकता। मांसाहार के साथ शाकाहार तो उनको लेना ही पड़ता है। मांसाहारी परिवारों में उत्पन्न होने से मांसाहार की आदत सहज ही पड़ जाती है। क्या खाना? क्या नहीं खाना? क्यों खाना ? क्यों नहीं खाना ? उस पर उनका कोई चिन्तन नहीं चलता ? जैसा चलता आया है, उसका ही वे अन्धाःनुकरण करते हैं। उनके संस्कार इतने परिपक्व हो जाते हैं, जिससे मांसाहार के दुष्प्रभावों से परिचित होने के बावजूद भी मांसाहार नहीं छोड़ पाते। जबकि कुछ व्यक्ति अपने, विवेकशून्य, चिन्तन के परिणामस्वरूप, बुराई को बुरा न समझने के कारण या मांसाहारियों की संगति में रहने से, घर से बाहर होटलों में जाकर मांसाहार लेना प्रारम्भ कर देते हैं। भारत में बढ़ते मांसाहार में ऐसे लोगों की ही संख्या ज्यादा है। अधिकांश व्यक्तियों को इस बात का पता ही नहीं चलता कि मांसाहार कैसे प्राप्त होता है ? यदि कोई व्यक्ति किसी प्राणी का क्रूरता, बेरहमी से वध होता देख लें तो उसका कलेजा दहल जायेगा और वह मांसाहार कभी नहीं करना चाहेगा। कारण चाहे जो हों, मांसाहार मानव का आहार नहीं है।

मांसाहार आर्थिक दृष्टि से महंगा होता है :-

1. मांसाहार शाकाहार की अपेक्षा महंगा होता है। जीवन अमूल्य हैं। अतः जो वस्तुएँ किसी को बिना हानि पहुँचाये प्राप्त हों, वे ही वस्तुएँ सस्ती होती है।
2. एक किलों मांस निर्माण के लिए लगभग सत्तर किलों घास पशुओं को खिलाना पड़ता है। उस अनाज के लिए जितनी जमीन चाहिए, उस जमीन में यदि अनाज पैदा किया जावे तो लगभग 70 लोगों को प्रतिदिन के एक वक्त का भोजन मिल सकता है।

मांसाहार से पर्यावरण बिगड़ता है :-

1. दुनियाँ में किसी भी प्राणी अथवा वनस्पति की सृष्टि निरर्थक नहीं होती। ष्ळवक हपअमे - वितहपअमे इनज उंद हमजे - वितहमजेष भगवान तो देता है, परन्तु मानव उसके एहसानों को भूल जाता है।
   प्रकृति का पर्यावरण संतुलित रखने एवं प्रदूषण को रोकने में सबकी अपनी भूमिका होती है। हम यदि इस सत्य को नकारते हैं तो यह हमारा अज्ञान ही है। जैसे चन्द वनस्पतियाँ खाने के लिए, कुछ पशु पक्षियों के आहार के लिये तो कुछ उनके रात्रि विश्राम हेतु आवश्यक होती है। कुछ पेड़ पौधे वर्षा को आकर्षित करते हैं, तो कुछ प्राण वायु छोड़ते हैं। प्रकृति के साथ आवश्यक छेड़छाड़ करने से ही प्राकृतिक विपदायें आती है।
2. आज तरंगों के प्रभाव से कौन परिचित नहीं है। टी.वी., रेडियों स्टेशनों से प्रसारित कार्यक्रमों की तरंगें क्षण मात्र में सारे विश्व में प्रसारित हो जाती है तथा हजारों मील दूर बैठा व्यक्ति उसी क्षण उस दृश्य को देख सकता है, सुन सकता है। दूरस्थ

और रेकी चिकित्सा करने वाले हजारों मील दूर बैठे व्यक्ति का उपचार कैसे करते हैं ?डाऊजिंग पद्धति द्वारा शरीर के छोटे से छोटे अवयव, जैसे रक्त की बूंद, बाल, नाखून आदि से, फोटों अथवा हस्ताक्षर की तरंगों के आधार पर संबंधित व्यक्ति के रोगों का निदान तथा प्रश्नों का समाधान कैसे ढूंढ लिया जाता है ? स्पष्ट है कि किसी पदार्थ से निकलने वाली तरंगों का प्रभाव तुरन्त समाप्त नहीं होता। तब क्या मांसाहार के कारण वध किये जाने वाले जानवरों की बद्दुआओं की तरंगें, क्या प्रकृति में असंतुलन पैदा नहीं करेगी ?मांसाहार करने वालों के विचार, रहन-सहन, चिन्तन-मनन को निश्चित रूप से विकृत करेगी। उनका आभामण्डल प्रदूषित होगा। स्वच्छ एवं शुद्ध आभामण्डल शरीर के ऊर्जा चक्रों को संतुलित रखता है। जो शारीरिक, मानसिक, आत्मिक विकास के लिये आवश्यक होता है।

आज जो इतनी अधिक हिंसा, आतंक, असहिष्णुता, क्रूरता, हत्याएँ, तनाव, भय, बैचेनी आदि मानसिक प्रदूषण का मुख्य कारण मांसाहार है। कोई भी जीव स्वेच्छा से मरना नहीं चाहता। मृत्यु से बचने के लिये पशु सब कुछ छोड़कर, उसको मारने वाले से दूर भागने का पूर्ण प्रयास करता है। अतः वध करते समय उस पशु को बांधकर, बेबस और निरीह बनाकर ही मारा जाता है। मारते समय वह पशु चीखता है, चील्लाता है, रोता है, आहें भरता है, छटपटाता है, उग्र और उत्तेजित होता है। आतंकित और भयभीत एवं गुस्से में होता है, जिससे उसके सारे अवयव विषैले हो जाते हैं। उससे जो बद्दुआएँ निकलती हैं, वे उसकी हत्या करने वाले, करवाने और जिसके लिये हत्या की जाती है, वे सभी प्रत्यक्ष परोक्ष रूप से प्रभावित हुए बिना नहीं रहते। ऐसी तरंगों से सारा पर्यावरण दूषित हो जाता है। नवीनतम वैज्ञानिक शोधों का निष्कर्ष है कि बूचड़खानों से निकलने वाली ऐसी तरंगों के कारण ही भूकम्प और अन्य प्राकृतिक विपदाएँ आती हैं। प्राकृतिक संतुलन प्रभावित होता है। जब किसी का आशीर्वाद, शुभ भावना, हमारा मंगल करती है तो, मांसाहार के लिए वध किये गये प्राणियों की बद्दुआएँ, चीत्कारें मांसाहारियों का निश्चित् रूप से अमंगल करेगी, इसमें तनिक भी संदेह नहीं होना चाहिये।

मांसाहार न्याय संगत नहीं ?:-

1. अगर कोई मनुष्य को खा जाता है तो उसको नर भक्षी कहा जाता है। ऐसे जानवरों को लोग जिन्दा नहीं रहने देते। परन्तु मांसाहारी जीवन पर्यन्त कितने प्राणियों की हत्या कर खाता है, फिर भी ऐसे मानव को सभ्य, बुद्धिमान प्रगतिशील मानना कदापि न्याय संगत नहीं हो सकता ?
2. प्राणियों को जीवित रहने के अधिकार से वंचित करना न्याय, नीति एवं कर्मशास्त्रों के सिद्धान्तों का स्पष्ट अतिक्रमण करना है।
3. अगर कोई दूसरों को आघात पहुँचाता है तो उसको भी भविष्य में वही सहना पड़ता है। यह कर्म का सनातन सिद्धान्त है। अतः सुख एवं शांति की चाहना करने वालों को अन्य प्राणियों को प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से कष्ट पहुँचाने में सहयोगी नहीं बनना चाहिये।
4. प्रकृति का दंड देने का अपना अलग ही विधान है। उसके कानून की अवहेलना करने वाला कभी बच नहीं सकता ''जैसा करोगे वैसा फल मिलेगा। जिसको मारने में सहयोगी बनेंगे, उसके हाथों मारे जायेंगे। प्रकृति के न्याय में देर हो सकती है, अन्धेर नहीं हो सकती। जो प्रकृति के इस अटूट सिद्धान्त को नकारता है, उसको भविष्य में पछताना पड़ेगा।

गला जो काटे और का, अपना रहे कटाय।
साई के दरबार में बदला नहीं जाये।।

मांसाहार नैतिक पतन का कारण :-

1. मनुष्य की भावना ही उसके कर्मो को प्रभावित करती है। जिसमें अहिंसा, दया, करुणा, परोपकार आदि की भावना होती है, वह ऐसा कोई कर्म करना या कराना नहीं चाहता, जिससे किसी अन्य प्राणी को पीड़ा पहुँचे।
2. जो अपने स्वाद या स्वास्थ्य लाभ के लिए पशु को कटवा कर उसका मांस खा सकता है,वह अपनी अन्य आकांक्षाओं की पूर्ति के लिए व्यापार, लेनदेन, पद-प्रतिष्ठा आदि प्राप्त करने में किसी की हिंसा करने या कराने में क्या संकोच करेगा। ऐसी स्वार्थ भावना वाले व्यक्ति से जीवन के किसी भी क्षेत्र में किस आचार संहिता पर चलने की आशा की जा सकती है।
3. मांसाहार से मस्तिष्क की सहनशीलता व स्थिरता का ह्रास होता है, वासना व उत्तेजना बढ़ाने वाली प्रवृति पनपती है, क्रूरता व निर्दयता बढ़ती है।

4. किसी की हत्या करने, क्रूरता व हिंसक कार्य करने में कुछ गलत महसूस ही नहीं होता। अहिंसा, दया, परोपकार की भावना तो उसमें पनप ही नहीं पाती। उसमें केवल स्वार्थ लाभ की भावना ही पनपती है जो उसे अपने तुच्छ स्वार्थ के लिए, जाति व देश तक का अहित करने से नहीं रोकती।
5. अपराधियों के सर्वेक्षण से पता चलता है कि प्राय: 75 प्रतिशत अपराधी मांसाहारी होते हैं तो केवल 25 प्रतिशत शाकाहारी। अर्थात् मांसाहार से अपराधिक प्रवृति भी बढ़ती है।

मांसाहार और अध्यात्म

दुनिया का कोई भी धर्म विश्वासघात की सीख नहीं देता। पहले तो पशुओं को पालना, अच्छा खिलाना-पिलाना तथा बाद में मांसाहार हेतु उनका वध करना अधर्म नहीं तो क्या ? इसीलिये सभी धर्म प्रवृत्तकों ने मांसाहार का निषेध किया। परन्तु उन्हीं के अनुयायी अपनी स्वाद लोलुप प्रवृति के कारण अज्ञान, अविवेक एवं सम्यक् चिन्तन के अभाव में भ्रामक कुतर्कों का सहारा ले धर्म के नाम पर पशुबली या कुर्बानी करें कितना विसंगत है ? प्राय: किसी भी धार्मिक कार्य को धार्मिक स्थानों में करने की मनाई नहीं होती। यदि कुर्बानी में धर्म होता तो मस्जिदों में कुर्बानी का निषेध नहीं होता।

जिस कार्य को धर्म स्थानों में करने का निषेध हो, उसको कैसे धर्म माना जा सकता है ?सभी चिन्तनशील व्यक्तियों को चिन्तन कर धर्म के नाम पर होने वाली कुर्बानी को रोकने हेतु पहल करनी चाहिए।

इस्लाम धर्म में तो रहम को अत्यधिक महत्त्व दिया गया है। रहम कहें या दया, अनुकंपा, करुणा, अहिंसा कोई अन्तर नहीं होता। कुरान और अन्य धार्मिक ग्रन्थों में स्थान-स्थान पर विविध प्रसंगों के माध्यम से रहम की प्रेरणा दी गई है।

इस्लाम मत में पैगम्बर मोहम्मद साहब ने पवित्र ग्रन्थ हवीस में अपना कलाम फरमाते हुये कहा ''सभी प्राणियों पर दया करों। दुनियाँ वालों पर तुम रहम करो, क्योंकि खुदा ने तुम पर बहुत मेहरबानी की है।'' इस्लाम में तो रक्त के उपयोग पर सख्त पाबन्दी है। मुसलमान तो एक बूंद भी खून अपने मुँह में नहीं ले सकता। बिना रक्त मांसाहार उपलब्ध नहीं होता। अत: जो खून से बचना चाहे, वह मांसाहारी कैसे हो सकता है ?रहम करने वाला क्रूर, निर्दयी, हिंसक नहीं हो सकता। जो संतान अपने माता-पिता, भक्त अपने भगवान और शिष्य अपने गुरु की माला फेरे, गुणगान करे, परन्तु उनकी आज्ञा का पालन न करें, ऐसी संतान, भक्त और शिष्य को आज्ञाकारी कैसे कहा जाय ? कुरान शरीफ में सुरे बकर में हज वर्णन में लिखा है। जानवरों को मारना और खेती को तबाह करना वे पसन्द नहीं करते। कुरआने हकीम की सूरत अलहज 32-22 में स्पष्ट किया है कि न तो पशु मांस और न ही उनका रक्त ईश्वर तक पहुँचता है। ईस्लाम में पशुओं के अधिकारों को बहुत महत्त्व दिया गया है और मनुष्य को आदेश दिया गया है कि उनके अधिकारों की रक्षा करें।

मांसाहार और स्वास्थ्य :-

1. आधि (मानसिक) व्याधि (शारीरिक), उपाधि (आत्मिक) के संतुलन से ही समाधि, शांति, सुख और स्वास्थ्य की प्राप्ति होती है। परन्तु मांसाहार इस संतुलन को बिगाड़ता है, अत: त्याज्य है।
2. क्या जिन जानवरों को मांसाहार के लिये मारा जाता है। उन पशुओं के स्वास्थ्य का परीक्षण होता है ?कहीं वे असाध्य, संक्रामक रोगों से पीड़ित तो नहीं होते ?कहीं मांस के साथ जानवरों के रोग एवं मवाद तो खाने वालों के शरीर में प्रवेश नहीं करते ?क्या जहर उबालने से अमृत बन जाता है ?इसीलिए तो कहा है-

   जब पेट भर सकती है, तेरा सिर्फ दो रोटियाँ।
   क्यों खाता है, बेजुबाँ की बोटियाँ।।

3. क्या जानवर-हंसते-हंसते इच्छा से मरता है ?जिस निर्दयता, क्रूरता, बेरहमी से उनको मारा जाता है। उस वातावरण से उत्पन्न तनाव, भय, घबराहट, घृणा छटपटाहट, बदला लेने की भावना आदि से पशुओं का मांस विषैला बन जाता है। ऐसा मांस खाने वाले के ह्रदय में दया, करूणा, संवेदना, सहानुभूति, परोपकार, सेवा जैसे मानवीय गुणों का हनन हो जाता है। मन में क्रूरता, उत्तेजना और हिंसात्मक विचार आते हैं। साथ ही मांसाहार से सैकड़ों रोग पैदा होते हैं एवं बढ़ते हैं। इसीलिए अमेरिका सरकार की दवाईयों की नीति निर्धारण संबंधी समिति के चिकित्सकों ने सन् 1991 में सरकार को जनता के योग्य जो आहार की सूची भेजी उसमें अण्डा, मछली और मांसाहार को बहिष्कृत किया गया है।

4. चेतनाशील हलन-चलन करने वाले त्रस जीवों में मृत्यु के पश्चात् हानिकारक कीटाणुओं की उत्त्पति अधिक एवं शीघ्र होती है। इस कारण मृत्यु के पश्चात् मृतक को जल्दी से जल्दी जलाया अथवा दफनाया जाता है। शवयात्रा में भाग लेने वाले अपने शरीर की शुद्धि हेतु स्नान करते हैं। क्या पशुओं का वध करते ही उनके मांस का भक्षण कर लिया जाता है? अगर नहीं तो उसमें रोग के कीटाणु उत्पन्न हों, आसपास के वातावरण को तो दूषित नहीं करते? मानव का पेट क्या कचरा पेटी है ताकि उसमें जब चाहों, जो चाहों, कुछ भी डाल दें? क्या मांसाहारियों का पेट मृत जानवरों का कब्रिस्तान है?
5. किसी भी रोगी को जब रक्त की आवश्यकता होती है तब डॉक्टर उस रोगी को उसके ग्रुप का ही रक्त क्यों देते हैं? क्या मांसाहारी ऐसा दावा कर सकते हैं कि मांस के साथ जो खून का अंश पेट में जाता हैं वह उनके ग्रुप का ही होता है? क्या विपरीत गुण वाला रक्त एवं मांस शरीर को हानि तो नहीं पहुंचाता है? इसीलिये जिन शाकाहारियों को उपचार हेतु मांसाहारियों का रक्त दिया जाता है, उनकी तामसिक प्रवृत्तियाँ बढ़ जाती है।
6. मांसाहार पाचन संस्थान को अस्त-व्यस्त कर देता है। यह लार को क्षार से अम्ल बना देता है। अतः लार में भोजन को पचाने की क्षमता उसी अनुपात में कम हो जाती है और पाचन संस्थान की निष्क्रियता बढ़ने लगती है। भोजन करना जितना आवश्यक है, उससे भी ज्यादा उसका पाचन आवश्यक होता है। अतः हमारा खान-पान हमारे पाचन तंत्र के अनुकूल होना चाहिये। विश्व स्वास्थ्य संगठन के बुलेटिन संख्या 637 के अनुसार लगभग 160 ऐसे असाध्य, संक्रामक रोगों की सूची प्रकाशित की गई है जिसका प्रमुख कारण मांसाहार बतलाया गया है।
7. मांसाहार से शरीर की प्रतीकारात्मक शक्ति घटती है। हड्डियाँ कमजोर होती है। स्मरण शक्ति घटती है। मानव ध्यान में स्थिर नहीं रह सकता। मनुष्य क्रूर, हिंसक, निर्दयी, कामी, क्रोधी, चिड़चिड़े स्वभाव वाला बनने लगता है। इसीलिये प्रायः मांसाहार भी शाकाहारी जानवरों का ही किया जाता है, मांसाहारी जानवरों का नहीं।
8. घोड़ा पूर्णतः शाकाहारी होता है। फिर भी ताकत का मापदण्ड अश्वशक्ति में होता है, शेर शक्ति में क्यों नहीं होता ? अतः मांसाहार को पौष्टिकता का प्रतीक बतलाना मिथ्या धारणा है।
9. शाकाहार आहार ही नहीं एक जीवन शैली भी है। आत्मानुशासन का प्रतीक है। वासनाओं का अवरोधक है। संयमित, अनुशासित जीवन का मूलाधार है।
10. मांसाहार से तामसिक वृत्तियाँ, दुर्गुण बढ़ते हैं। तामसिक प्रवृत्ति वाला प्रायः श्रम जीवी नहीं हो सकता। वह हमेशा आराम खोजता है। उसे लेटने का अवसर मिले तो वह बैठेगा नहीं। अगर खड़े होने का अवसर मिलेगा तो चलेगा नहीं। चलने का अवसर मिलें तो दौड़ेगा नहीं। मांसाहारी व्यक्ति लम्बे समय तक श्रम नहीं कर सकते, जल्दी थकते हैं।
11. क्या बालक जन्मते ही मांसाहार कर सकता है? नहीं कदापि नहीं? कोई भी शाकाहारी मानव पूर्ण शाकाहारी हो सकता है, परन्तु कोई भी मांसाहारी व्यक्ति पूर्ण मांसाहारी नहीं हो सकता। उसे भी शाकाहार तो करना ही पड़ता है। अतः मांसाहार मानवीय आहार नहीं हो सकता।
12. रोग के लिए भोजन ही एक मात्र कारण नहीं है। अतः ऐसा सोचना ठीक नहीं है कि शाकाहारी कभी बीमार ही नहीं होते हैं। सदैव स्वस्थ ही रहते हैं। तुलनात्मक दृष्टि से मांसाहारी ज्यादा रोगी, अपराधी, अव्यावहारिक, अनैतिक और तनावग्रस्त होते हैं।
13. मांसाहार से व्यक्ति दुर्गति अर्थात् नीच योनि में जाता है। नरक योनि में जाने का प्रमुख कारण मांसाहार भी है।
14. मांस देखने और सूंघने में भी अप्रिय लगता है।

भोजन के बारे में मायावी, भ्रामक दुष्प्रचारों का प्रभाव :-

आहार के संबंध में भ्रामक प्रचार ओर विज्ञापनों के कारण जन साधारण में व्यापक रूप से फैली गलतफहमी शायद यह है कि शाकाहार से शरीर को उतना पोषण प्राप्त नहीं होता जितना मांसाहार से होता है। उनका आधार है चिकित्सकों का पौष्टिक तत्त्वों की आवश्यकता के बारे में एकपक्षीय आंशिक पूर्वाग्रसित चिन्तन। मायावी एवं झूठे आंकड़ों का मांसाहार उत्पादकों द्वारा अधिक लाभ कमाने हेतु संचार माध्यमों से भ्रामक दुष्प्रचार तथा सरकार की विदेशी मुद्रा अर्जित करने हेतु मांसाहार उद्योग को प्रोत्साहन देने वाली नीतियाँ। स्वास्थ्य मंत्रालय की जनता के स्वास्थ्य को बिगाड़ने वाली मांसाहार के प्रति उपेक्षा वृति तथा कानून

मंत्रालय द्वारा भ्रामक विज्ञापनों पर प्रतिबंध लगाने हेतु अपने दायित्वों का पालन न करना। परिणाम स्वरूप जो नहीं खिलाना चाहिए, उसे खिलाया जा रहा है। शराब आदि जो नहीं पीलाना चाहिए, पीलायी जा रही है।

देश में हिंसा का दावानल जल रहा है,
कृषी के नाम पर आज मांसाहार पल रहा है।
हिंसा, भ्रष्टाचार और अनीति में भी,
भगवान जाने यह देश कैसे चल रहा है।

मानव मांसाहार क्यों करता है ?:-

प्रत्येक व्यक्ति का प्रयास जीवन में शांति, सुख, स्वस्थता, आनन्द, प्रसन्नता की प्राप्ति करना होता है। जिस कार्य में उसे लाभ होता है उसको करने की उसकी भावना होती है। कोई भी व्यक्ति ऐसा आचरण नहीं करना चाहता जिससे उसको हानि, तनाव, दुःख आदि हो। प्रश्न खड़ा होता है कि कोई मनुष्य मांसाहार क्यों करता है ? क्या मांसाहार स्वास्थ्य, आर्थिक, मानवीय, पर्यावरण, प्रकृति व कानून की दृष्टि से उत्तम है ? अथवा उनका सोच, धारणायें, मान्यतायें विज्ञापन, पूर्वाग्रह एवं अन्धाःनुकरण से प्रेरित है। क्या मांसाहारी शाकाहार के अच्छे बुरे परिणामों के बारे में सजग होता है ? प्रकृति में सभी जीव जीना चाहते है। कोई मरना नहीं चाहता। मनुष्य जैसा बुद्धिमान प्राणी मांसाहार के लिये उन बेजुबान, निराश्रित, मूक प्राणियों का वध करें यह कहाँ तक उचित है ?जो प्राण हम दे नहीं सकते, उनको लेने का हमें किसने अधिकार दे दिया ? यह मानव के स्वार्थीपन का प्रतीक है। ताकत का दुरुपयोग है। पागलपन का परिचायक है। हिंसक मनोवृत्ति मानवता पर कलंक है। प्रायः मांसाहारी स्वाद, ताकत और फैशन आदि कारणों से मांस खाता है। मांसाहार से ताकत आती है यह बिल्कुल मिथ्या धारणा है। युद्ध में हजारों योद्धाओं को जीतने वालों से अपने मन और आत्मा पर विजय पाने वाला ज्यादा शक्तिशाली होता है। परन्तु मांसाहार तो मन और स्वाद का गुलाम बनाने वाला और आत्मा को विकारी बनाने वाला है। अतः मांसाहार से तो मनोबल और आत्मबल बढ़ने के बजाय क्षीण होता है। स्वाद के लिए मांसाहार करने वालों का मजा तो दो इंच की जीभ लेती है। बिगड़ता पाचन संस्थान है और रोग ग्रस्त होता है सारा शरीर। फैशन के लिए तो मांसाहार विवेकशून्य, असजग व्यक्ति ही कर सकता है।

क्या मांसाहार मजबूरी है ?:-

पशु बलि एवं धर्म के नाम पर कुर्बानी जैसी रुढ़िवादी मान्यताओं के कारण भी बहुत से व्यक्तियों को न चाहते हुए भी मात्र परम्पराओं के निर्वाह के लिये मांसाहार करने हेतु विवश होना पड़ता है, क्योंकि उनमें अन्याय, अत्याचार एवं गलत प्रचलित परम्पराओं का विरोध करने का साहस नहीं होता। आज जब भोजन के अनेकों विकल्प उपलब्ध हैं तब मांसाहार के लिए पशुओं का वध कदापि उचित नहीं हो सकता ?सभी प्राणी चाहें वे मनुष्य अथवा पशु-पक्षी हों, प्रकृति के परिवार के सदस्य होने से आन्तरिक रूप से जुड़े हुये हैं। जैसे कोई भी व्यक्ति अपने संबंधी का मांस नहीं खाता, ठीक उसी प्रकार मांसाहार से भी परहेज किया जाना चाहिये। मनुष्य के लिये मांसाहार मजबूरी नहीं है। अतः स्पष्ट है मांसाहार मनुष्य के दिमाग की विकृति का परिणाम है। इसीलिये महापुरुषों ने स्पष्ट कहा है-

अगर आराम चाहते हो तो, नसीयत ये हमारी है।
किसी का मत दुःखाओं दिल, सभी को जान प्यारी है।।

मांसाहार से हानियाँः-

मांसाहार करने के पीछे कारण कुछ भी रहे हों, मांसाहार करने वाला मनुष्य क्रूर, हृदयहीन और हिंसक बन जाता है। मनुष्य में असहनशीलता, चिड़चिड़ापन, वासानायें बढ़ने लगती है। श्रम करने की इच्छा नहीं होती। शरीर रोगों की तरफ जल्दी आकर्षित होता है। हड्डियाँ कमजोर हो जाती है। मांसाहारी व्यक्ति को चिन्तन करना होगा कि वह मांसाहार कर रहा है या मांसाहार हमारी संस्कृति और सभ्यता को निगल रहा है। हमें स्वीकार करना होगा, मांसाहार करना सामाजिक अपराध है। प्रकृति के कानूनों के विरुद्ध है और मनुष्य का आहार नहीं है।

भोजन के संबंध में स्वास्थ्य विशेषज्ञों का सोच अपूर्ण :-

आज विज्ञान का युग है। अतः आहार के संबंध में भी जब तक कोई सिद्धान्त आधुनिक स्वास्थ्य वैज्ञानिकों, चिकित्सकों द्वारा स्पष्ट रूप से मान्य नहीं कर दिया जाता, तब तक अधिकांश जन मानस एवं स्वास्थ्य मंत्रालय उस बात को जानने, मानने, सुनने, समझने, स्वीकारने अथवा अपनाने में संकोच करता है।

आधुनिक वैज्ञानिकों ने विभिन्न खाद्य पदार्थों में उपलब्ध शरीर के लिए आवश्यक प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट (शर्करा), वसा (चिकनाई), खनिज, जल, केलोरिज एवं विटामिन्स आदि स्वास्थ्यवर्द्धक तत्त्वों तथा उनसे शरीर पर पड़ने वाले प्रभावों और उनकी मात्रा का अनुपात क्या हो ?उस संबंध में विस्तृत शोध कर जन साधारण को परिचित कराया ?आज अधिकांश आधुनिक चिकित्सकों का भोजन के बारे में परामर्श का वही मुख्य आधार होता है।

अधिकांश आहार विशेषज्ञों ने शरीर को ताकतवर, शक्तिशाली बनाने हेतु आवश्यक रसायनिक तत्त्व और ऊर्जा को जैसे-प्रोटीन, विटामिन, कार्बोज, लवण, जल, वसा और केलोरीज की मात्रा को तो अत्यधिक महत्त्व दिया। किसी खाद्य पदार्थ में क्या-क्या तत्त्व कितनी-कितनी मात्रा में होते हैं, उनकी जानकारी से जनसाधारण को अवगत कराया। परन्तु भोजन के अवयव कितने सात्त्विक, अहिंसक, शुद्ध और पवित्र होने चाहिये, उस संबंध में अपेक्षित प्राथमिकता नहीं दी ?परिणाम स्वरूप पौष्टिकता के नाम पर आज भक्ष्य-अभक्ष्य, खाद्य-अखाद्य, करणीय-अकरणीय, अहिंसा-हिंसा, न्याय-अन्याय, वर्जित-अवर्जित आदि का विवेक मानव खोता जा रहा है।

अधिकांश आहार गोष्ठियों में भोजन के पौष्टिक तत्त्वों एवं केलोरीज के बारे में ही चर्चा और चिन्तन, प्रायः सीमित होता है। भोजन से जीवन क्यों, कितना और कैसे प्रभावित होता है ? प्रायः चर्चित नहीं होता ?

भोजन में क्या खाना चाहिए और क्या नहीं खाना चाहिए ? भोजन कब, कहाँ, कैसे और कितना करना चाहिए तथा भोजन कब, कैसे और कहाँ और कैसे नहीं खाना चाहिए ? भोजन कैसे बनाना और खिलाना चाहिये तथा कैसे नहीं बनाना और नहीं खिलाना चाहिये। भोजन बनाने वालों की भावना और भोजन प्राप्ति के स्रोत कैसे होने चाहिये ?

विज्ञान ने मानव के शरीर को तो बहुत अधिक महत्त्व दिया। समस्याओं का आंशिक समाधान तो किया। परन्तु आत्मशक्तियों को विकसित करने में सफल नहीं हुआ। चेतना के प्रभावों की उपेक्षा करने तथा अपनी क्षमताओं से अपरिचित होने के कारण अभी तक शरीर के लिए अतिआवश्यक कोशिकाओं, रक्त, मांस, मज्जा, अस्थि, वीर्य आदि अवयवों, आँख, कान, नाक, जीभ, त्वचा आदि इन्द्रियों, हृदय, लीवर, गुर्दे, फेंफड़ें, तिल्ली आदि अंगों का निर्माण नहीं कर सका। जिसका निर्माण प्रत्येक व्यक्ति का शरीर स्वयम् करता है। ऐसे विज्ञान को सर्वे-सर्वा मान उस पर आधारित प्रत्येक सोच का अन्धा:नुकरण कैसे तर्क संगत हो सकता है ? जो प्रकृति के सनातन सिद्धान्तों की उपेक्षा करता है, ऐसा स्वास्थ्य विज्ञान अपने आपको सम्पूर्ण मानने का दावा कैसे कर सकता है ?

आहार चयन की प्राथमिकताएँ क्या हो ?

आहार में पौष्टिक तत्त्वों का निश्चय ही बहुत महत्त्व होता है। अपौष्टिक आहार से भी स्वास्थ्य को हानि होती है, परन्तु आधुनिक विज्ञान की बातें करने वाले चिकित्सक जितनी पौष्टिक तत्त्वों की बातें करते हैं उतनी उससे भी आवश्यक अस्वच्छ वातावरण में बने, मिलावटी डिब्बे बंद या तामसिक खाद्य पदार्थों आदि को न खाने तथा रात्रि भोजन न करने का परामर्श क्यों नहीं देते ?स्वास्थ्य विज्ञान मात्र जड़ अथवा भौतिक विज्ञान ही नहीं है। उसके साथ चेतना भी जुड़ी हुयी है और जो स्वास्थ्य विज्ञान, चेतना पर पड़ने वाले दुष्प्रभावों की उपेक्षा करता है, उस विज्ञान का आहार संबंधी मापदण्ड, सोच एवं मार्गदर्शन कैसे सदैव आचरणीय हो सकता है ?

जब तक शरीर में आत्मा (चेतना) है, तभी तक उसका महत्त्व होता है। शरीर में से आत्मा के अलग होने के पश्चात् मृत शरीर का कोई मूल्य नहीं होता।

शरीर से आत्मा का महत्त्व ज्यादा होता है। शरीर से मन और आत्मा के विकार ज्यादा हानिकारक एवं खतरनाक होते हैं। अतः जो भोजन शरीर को पुष्ट रखने के बावजूद मन और आत्मा के विकारों को बढ़ाता है, वह भोजन अच्छा नहीं हो सकता ? स्वच्छ कपड़े पहन आभूषण पहनने से शरीर की शोभा बढ़ती है। जिस प्रकार बिना कपड़े आभूषण से शरीर को सजाने वालों पर दुनियाँ हँसती है। यद्यपि आभूषणों का मूल्य तो कपड़ों (पोशाक) से ज्यादा ही होता है। ठीक उसी प्रकार पौष्टिकता और स्वाद के नाम पर मन और आत्मा को विकारी और कमजोर बनाने वाला भोजन करना अदूरदर्शिता पूर्ण आचरण ही होता है। जिस

प्रकार विष की चंद बूंदे टनों दूध को जहरीला बना देती है। एक चिंगारी सारे घास के ढ़ेर को जलाने की क्षमता रखती है। एक सांप के काटने से व्यक्ति मर सकता है। मृत्यु के लिए सौ सर्पो के काटने की आवश्यकता नहीं होती। ठीक उसी प्रकार भोजन में से उपर्युक्ततथ्यों में से किसी भी तथ्य की उपेक्षा, भोजन से होने वाले लाभ से हमको वंचित रख सकती है।

भोजन की समीक्षा आवश्यक :-

हमें चिन्तन करना होगा की हमारे भोजन का उद्देश्य क्या है? हम भोजन क्यों करते हैं? भोजन कैसा करना चाहिए? भोजन कब, क्यों, कितना और कैसे वातावरण में अधिक लाभप्रद होता है? भोजन कैसे बनाया जाता है और किन भावों के साथ हमें खिलाया जाता है? भोजन हमारी शारीरिक पाचन प्रणाली के अनुकूल भी है अथवा नहीं? भोजन में क्या-क्या उपयोगी और क्या-क्या अनुपयोगी अनावश्यक, हानिकारक तत्त्व हैं?

भोजन के अवयव कितने शुद्ध और पवित्र हैं?किन-किन पदार्थों को साथ में खाया जा सकता है तथा किन-किन पदार्थो को एक साथ खाना अहितकर होता हैं?भोजन प्राप्ति का स्रोत कितना नैतिक है? भोजन करते समय हमारे आसपास का वातावरण, बनाने और खिलाने वाले की मानसिकता, विचार और भावना कैसी है?हमारे पाचन तंत्र में भोजन का पूर्ण पाचन हो, आवश्यक अवयवों का निर्माण हो भी रहा है अथवा नहीं?

आजकल खाद्य पदार्थो के उत्पादन में रासायनिक खाद, विषैली कीटनाशक दवाओं का अधिक उपयोग होता है। अप्राकृतिक रासायनिक खाद के उपयोग एवं कीटाणुनाशक औषधियों के अधिक प्रयोग के कारण फल और सब्जियाँ दूषित हो जाती है। क्या ऐसे फल और सब्जियाँ बिना पकाये खाना हानिकारक तो नहीं?बदलती परिस्थितियों में जो सलाद आहार का आवश्यक एवं स्वास्थ्य के लिए उपयोगी समझा जाता था, कहीं, स्वास्थ्य के लिए हानिकारक तो नहीं? वे चीजें शरीर का सम्पूर्ण पोषण नहीं कर सकती, बल्कि उसके सेवन से शरीर में विभिन्न प्रकार के विकार उत्पन्न होने की संभावना रहती है। हमें पूर्वाग्रह छोड़ वास्तविकता को समझना होगा। अगर कच्ची सब्जियाँ और फल खाना ही है तो प्राकृतिक खाद एवं बिना कीटनाशक के प्रयोग से निर्मित फल एवं सब्जियों को प्राथमिकता देनी चाहिए।

भोजन में उपर्युक्त बातों का जितना ज्यादा विवेक, चिन्तन और परिपालना होती है, भोजन उतना ही अच्छा, स्वास्थ्यवर्द्धक एवं निर्दोष होता है। इसके विपरीत उपर्युक्त बातों की जितनी-जितनी उपेक्षा होती है, उतना ही भोजन हानिकारक एवं दोषपूर्ण होता है। कोई काम कैसे किया जाए, इसका निर्धारण मस्तिष्क करता है। मन के वशीभूत जब व्यक्ति अपने आहार व्यवस्था को गड़बड़ कर देता है, उसकी मार पूरे शरीर को रोग के रूप में भुगतनी पड़ती है। मन की उड़ान तो असीमित होती है। उसे रोकने के लिये व्यक्ति को सजगता के साथ मस्तिष्क का उपयोग करना चाहिये।

क्या हम अपने स्वास्थ्य के प्रति सजग हैं?

कुछ बातें हमारे नियन्त्रण में होती है। हमारे स्वविवेक एवं स्वयं के सम्यक् चिन्तन पर निर्भर करती है, जबकि कुछ बातों पर हमारा पूर्ण नियन्त्रण नहीं होता। जैसे नगर निगम द्वारा उपलब्ध कराया गया जल, शहरों में ध्वनि प्रदूषण एवं पर्यावरण से दूषित वातावरण की स्थिति, रासायनिक खाद और कीटनाशकों से प्रभावित खाद्य सामग्री, बाजार में उपलब्ध खाद्य पदार्थो में शुद्धता अर्थात मिलावट न होना, टी.वी. और अन्य संचार माध्यमों पर उपभोक्ताओं को आकर्षित करने वाले मायावी, भ्रामक हानिकारक पदार्थो का खुलम-खुल्ला प्रचार इत्यादि पर प्रायः हमारा पूर्ण नियन्त्रण नहीं होता। परिणाम स्वरूप आज का इन्सान न खाने की चीजें खा रहा है, न पीने की चीजें पी रहा है। भूख के बिना भी खा रहा है। भूख से ज्यादा भी खा रहा है। अकाल यानी रात में भी खा रहा है। अपाच्य और अभक्ष्य भी खा रहा है। फिर भी अपने आपको बुद्धिमान मान रहा है। अतः अपने आपको स्वस्थ रखने की कामना रखने वालों को अपने से नियन्त्रित प्रवृतियों पर नियन्त्रण करना चाहिये, जैसे अभक्ष्य पदार्थ उपयोग में नहीं लेना, जब आमाशय सक्रिय हो तब भोजन करना, जब पाचन तंत्र असक्रिय हो भोजन नहीं करना। बार-बार नहीं खाना। अशुद्ध, पदार्थो से बने भोज्य पदार्थो को नहीं खाना अर्थात् यथा संभव घर में शांत और स्वच्छ वातावरण में बने भोजन को करना। बाजार में बनी भोजन योग्य वस्तुओं का उपयोग कम करना। भोजन चबा-चबा कर नीचे बैठ, शान्त, एकाग्रचित्त से करना, भोजन खाने के पश्चात् उससे पड़ने वाले प्रभावों की समीक्षा करना इत्यादि बातों पर हमारा नियन्त्रण संभव होता है। जो

व्यक्ति उपर्युक्त बातों के प्रति जितना अधिक सजग बन आचरण करता है, मन और इन्द्रिय विषयों पर नियन्त्रण रख शरीर और आत्मा को विकारों से मुक्त रखता है, वही व्यक्ति अपेक्षाकृत स्वस्थ जीवन जीता है।

क्या बुद्धिमान व्यक्ति मांसाहारी हो सकता है ?:-

बुद्धिमान कौन ? अपने स्वास्थ्य की रक्षा करने वाला या उपेक्षा करने वाला ? अपनी क्षमताओं का सदुपयोग करने वाला अथवा दुरुपयोग करने वाला या अपव्यय करने वाला ? दयालु या क्रूर, स्वार्थी अथवा परमार्थी ? अहिंसक अथवा हिंसक ? अन्य प्राणियों के प्रति मैत्री और प्रेम का आचरण करने वाला या द्वेष और घृणा फैलाने वाला ? जीओ और जीने दो के सिद्धान्तों को मानने वाला या दूसरों को स्वार्थ हेतु कष्ट देने वाला, सताने वाला या नष्ट करने वाला? उपर्युक्त मापदण्डों के आधार पर ही मनुष्य को सभ्य, सजग, सदाचारी और बुद्धिमान अथवा असभ्य, असजग, दुराचारी और मूर्ख समझा जाता है। अपने-अपने खाने की आदतों के आधार पर हम स्वयं निर्णय करें कि हमारा खान-पान कितना बुद्धिमत्ता पूर्ण हैं ?

सारांश यही है कि मांसाहार स्वास्थ्य की दृष्टि से हानिकारक, आर्थिक दृष्टि से महंगा, आध्यात्मिक दृष्टि से नीच गति में ले जाने वाला, मानवीय गुणों का नाश करने वाला, पर्यावरण की दृष्टि से प्रकृति में असंतुलन पैदा करने वाला तथा न्याय की दृष्टि से अन्याय का पोषण करने वाला है। अतः जो मांसाहार करते हैं, करवाते हैं अथवा करने वालों को अच्छा समझते हैं, वे सभी असजग हैं। असंस्कारित है। अमानवीय हैं। अपनी रसनेन्द्रिय के गुलाम, स्वाद लोलुप हैं। पराधीन एवं परालम्बी हैं। उदासीन हैं। भ्रमित हैं। स्वयं के प्रति भी ईमानदार नहीं हैं। वास्तव में जो बुराई को जानते, मानते हुए भी न स्वीकारें, उस व्यक्ति, समाज और सरकार को कैसे बुद्धिमान समझा जायें ?